पूर्वांचल खेती

वर्ष : 34 जून 2024 अंक : 06

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

वर्ष 34 | जून 2024 | अंक 06

संरक्षक

डॉ. बिजेन्द्र सिंह

कुलपति

प्रधान सम्पादक

डॉ. आर. आर. सिंह

अपर निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक

डॉ. के.एम. सिंह

वरिष्ठ प्रसार अधिकारी/सह प्राध्यापक

डॉ. अनिल कुमार

सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

सम्पादक मण्डल

डॉ. वी. पी. चौधरी

सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

डॉ. पंकज कुमार

सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

सम्पादक

उमेश पाठक

मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

विषय सूची

सुगंधित बौना कालानमक धान की जैविक खेती 01
राघवेन्द्र विक्रम सिंह, अरविंद कुमार सिंह एवं तरुण कुमार

तिल की वैज्ञानिक खेती 05
रामलखन सिंह, मनोज कुमार सिंह एवं मिथिलेश कुमार पांडेय

अरहर की एकीकृत फसल प्रबन्धन 07
राम जीत, राम गोपाल एवं विद्या सागर

मडुआ (रागी) की उन्नत खेती 10
अंगद प्रसाद, लाल पंकज कुमार सिंह एवं विनय कुमार सिंह

औषधीय फसल अश्वगंधा की खेतीः अतिरिक्त आय का श्रोत 12
सियाराम, आर. के. आन्नद एवं एस.के. वर्मा

नेट हाउस में जरबेरा की खेती : कम लागत अधिक मुनाफ़ा 15
सुनील कुमार, संकेत कुमार मौर्य एवं नवीन कुमार यादव

मैंगोस्टीन की खेती के लिए व्यापक मार्गदर्शिकाः रोपण और कटाई 17
अभिषेक सोनकर, बृजेश पटेल एवं संतोष कुमार वर्मा

सहजन की खेती : किसानों के लिए एक लाभदायक व्यवसाय 19
अनिल कुमार, वीरेन्द्र कुमार एवं प्रवेश कुमार

कृत्रिम विधि द्वारा कार्प मछलियों का बीज उत्पादन 21
प्रमोद कुमार, सियाराम एवं एस. के. वर्मा

विभिन्न मौसम में सेहत का कैसे रखें ध्यान 23
कंचन एवं एस.के. तोमर

वृद्धावस्था में संतुलित पोषण एक सर्वांगीण स्वास्थ्य कुंजी 27
ज़ीनत अमान एवं साधना सिंह

आइए जानें क्या है उत्तर प्रदेश मुख्यमंत्री खेत सुरक्षा योजना 30
अनिल कुमार

कृषि विविधीकरण ने बनाया मंशाराम को मालामाल 32
रूपन रघुवंशी, अश्वनी कुमार सिंह एवं शैलेश कुमार सिंह

जून माह में किसान भाई क्या करें? 33

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के 34

बॉक्स सूचनाएं

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये, आगे बढ़िये 31

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/ प्रभारी अधिकारी	दूरभाष कार्यालय	मोबाइल
1.	वाराणसी	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	05542–248019	9415687643
2.	बस्ती	डॉ. एस.एन. सिंह	05498–258201	9450547719
3	बलिया	डॉ. संजीत कुमार	–	9837839411
4.	अयोध्या	डॉ. विनायक शाही	05278–254522	8755011086
5.	मऊ	डॉ. वी.के. सिंह	0547–2536240	8005362591
6.	चंदौली	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	0541–2260595	9415687643
7.	बहराइच	डॉ. शैलेन्द्र सिंह	05252–236650	9411195409
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	–	9415155518
9.	आज़मगढ़	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020
10.	बाराबंकी	डॉ. अश्वनी कुमार	–	7985749643
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	–	7839325836
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	–	9984369526
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. ओ.पी. वर्मा	05541–241047	9452489954
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	–	9415450175
15.	बलरामपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	–	9450885913
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	–	9918622745
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	–	9415039117
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	–	9838952621
19.	नानपारा–बहराइच	डॉ. शशिकान्त यादव	–	9415188020
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. मिथलेश पाण्डे	–	9415665138
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. वी.पी. सिंह	–	9839420165
22.	अमिहित–जौनपुर	डॉ. आर.के. सिंह	–	9452990600
23.	आँकुशपुर–गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	–	9411320383
24.	श्रावस्ती	डॉ. विनय कुमार	–	7524828225
25.	लैदोरा–आजमगढ़	डॉ. एल.सी. वर्मा	–	7376163318

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–
2.	गोण्डा	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–
3.	देवरिया	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–
4.	गाजीपुर	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि अनुसंधान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	मसौधा, अयोध्या	डॉ. डी. के. द्विवेदी	7706884188	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	05442–284263
3.	बसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. महेन्द्र सिंह	9934318392	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. आर.सी. वर्मा	9411320383	–
6.	बहराइच	डॉ. मनीष कुशवाह	7404673927	0548–223690

डॉ. आर. आर. सिंह
अपर निदेशक प्रसार

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

सम्पादकीय

कृषक आय संवर्धन के लिये भारत सरकार के निरन्त प्रयास तथा कृषि शोध में किये गये सफल प्रयासों के बाद अब हमारे किसान भाईयों के पास लगभग सभी फसलों व मौसम में खेती के लिये अधिकाधिक फसलों के विकल्प मौजूद हैं। इस क्रम में जहां अब तक खरीफ की प्रमुख फसल धान मानी जाती थी अब खरीफ में विभिन्न भौगोलिक व जलवायु परिस्थितियों के लिये दलहनी, औद्योगिक, औषधीय फूल व सब्जी की खेती के लिये उन्नतशील प्रजातियां उपलब्ध हैं। आवश्यकता इस बात की है कि हमारे किसान भाई अपनी परिस्थितियों व आवश्यकताओं के अनुरूप फसलों का चयन करें। पत्रिका के इस अंक में उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिक लेख प्रस्तुत किये गये हैं। आशा है कि पत्रिका का यह अंक हमारे किसान भाईयों, प्रसार कार्यकर्ताओं व कृषि क्षेत्र में कार्यरत सभी कार्यों के लिये उपयोगी सिद्ध होगा।

(आर.आर. सिंह)

सुगंधित बौना कालानमक धान की जैविक खेती

राघवेन्द्र विक्रम सिंह, अरविंद कुमार सिंह एवं तरुण कुमार

कालानमक धान पूर्वी उ०प्र० की एक जानी–मानी सुगन्धित धान की प्रजाति है। जो कि स्वाद व सुगन्ध में बासमती से भी उत्तम मानी गई है। इसकी खेती उ०प्र० में आज से 40–50 वर्ष पहले 40–50 हजार हे० क्षेत्रफल में की जाती थी। अधिक उत्पादकता वाली धान की प्रजातियों के प्रचलन के बाद इसकी खेती का क्षेत्रफल घटता गया, कारण यह था कि किसान को अधिक उत्पादकता बौनी प्रजातियों से अधिक आर्थिक लाभ मिलने लगा और कालानमक का क्षेत्रफल घटकर मात्र 2000 हे० रह गया। इसके क्षेत्रफल घटने का दूसरा कारण था कि कालानमक वर्ग में सवंर्द्धित तथा अधिक उत्पादन देने वाली प्रजातियां विकसित नहीं की गई। वर्ष 2010 में भारत सरकार द्वारा "कालानमक केएन 3" नामक प्रजाति विमोचित की गई। यह प्रजाति लम्बी और कम उपज वाली थी, किन्तु इसका स्वाद और सुगन्ध सर्वोत्तम था।

बौना कालानमक इस समय प्रचलित किसी भी धान की बौनी प्रजाति के बराबर पैदावार देता है। इसका प्रमुख कारण पौधे का छोटा होना तथा उसकी बाली का लम्बा और बालियों में दानों की संख्या का दोगुना होना है। इस प्रजाति का मुख्य गुण, बौना कालानमक एक प्रकाश अवधि की संवेदी प्रजाति है, जिसमें बालियां 20 अक्टूबर के आस–पास निकलती हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश में काला नमक की प्रजातियों में आ रही कमियों पर कई बीज उत्पादक (अभिजनक वैज्ञानिकों) संस्थाओं के द्वारा लगातार कार्योपरान्त कालानमक की कई प्रजातियों जो वर्ष 2016 में प्रचलन में आई उनकी उत्पादन क्षमता अधिक होने के साथ–साथ पौधों की लम्बाई (ऊंचाई) भी कम है। जिस कारण इसको बौना कालानमक धान की संज्ञा प्रदान की गई। कालानमक धान के जैविक प्रबंधन में पोषक तत्वों का महत्व कालानमक के प्रबंधन में पोषक तत्वों का महत्वपूर्ण योगदान है। समुचित पोषक तत्त्व न मिलने से इसकी उपज घट सकती है।

जैविक खेती

आजकल जैविक खेती पर केन्द्र व प्रादेशिक सरकारें जोर दे रही हैं। यह वातावरण की सुरक्षा, भूमि और पानी के संरक्षण को देखते हुए किया जा रहा है। किसान को जैविक तरीके से लगाई हुई फसल का दाम भी रासायनिक या गैरजैविक विधि से तैयार फसल से अधिक मिल रहा है। सामान्य चावल की कीमत बाजार में 3500 से 4000 रूपये प्रति कु० है, जबकि कालानमक की कीमत 8000 से 9000 रूपये प्रति कु. है। वहीं जैविक कालानमक की कीमत 10000 से 12000 रूपये प्रति कु० है। हानिकारक रसायनों के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव को देखते हुए उपभोक्ता भी अधिक दाम देकर जैविक उत्पादों को खरीदकर उपयोग में ला रहे हैं। यही कारण है कि किसान को अधिक आर्थिक लाभ (दो से तीन गुना) मिल रहा है। और वे काला नमक धान की खेती में रूचि ले रहे है। इस प्रकार आसानी से बौने कालानमक की खेती कर किसान अपनी आय दो से तीन गुना बढ़ा सकते हैं।

उपयुक्त भूमि

ऐसी भूमि जो मटियार या मटियार दोमट तथा जल रोकने की क्षमता वाली हो, इसके लिए अच्छी पायी गई है। इसकी खेती के लिए बलुई या बलुई दोमट मिटटी उपयुक्त नहीं है। अधिक नमक से प्रभावित क्षारीय भूमि में भी इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

बीज और बीजशोधन

चूंकि बौना कालानमक का दाना छोटा होता है। इसलिये 25–30 किलोग्राम बीज एक हे० में खेती के लिए पर्याप्त होता है। जैविक खेती में प्रयोग होने वाले बीज में किसी भी प्रकार का रासायनिक बीज शोधन नहीं किया जाता। अतः बीज बोने से पहले उसका शोधन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जैविक खेती में बौने कालानमक की बीज शोधन करने हेतु निम्न विधियों में से किसी एक को अपनाया जा सकता हैः

स्यूडोमोनस 10 ग्राम प्रति किग्रा० बीज की दर से बीज अंकुरण के लिए बीज भिगोते समय पानी में डालें। रात भर बीज भिगोने के बाद सुबह बीज को पानी से निकालकर अंकुरण के लिए ढककर रखें।

अंकुरण के लिए बीज भिगोने से पहले 53 से 54 डिग्री

कृषि विज्ञान केंद्र, संत कबीर नगर

सेल्सियस गर्म पानी में बीज को डुबोया जाए। इसको गर्म पानी से निकालने के बाद पुनः सामान्य पानी में रात भर भिगोया जाये। बीज को पानी से निकालकर अंकुरण के लिये बोरे से ढककर रखें।

बीज को एजोस्पीरीलम की 10 ग्राम मात्रा प्रति किग्र 10 बीज की दर से मिलाकर शोधित किया जाये। यदि एजोस्पीरीलम उपलब्ध नही है तो फॉस्फोरस सॉल्यूबलाइजिंग बैक्टीरिया (पीएसबी) अथवा फॉस्फोरस साल्यूबलाइजिंग माइक्रो आर्गेनिज्म (पीएसएम) का उपयोग किया जा सकता है।

बीज शोधन की अन्य विधियां उपयोग में लायी जा सकती हैं जैसे–गाय का दूध, गाय का मूत्र। बीजामृत आदि पानी में बीज को 30 मिनट भिगोकर उपयोग में लाया जा सकता है। लकड़ी की राख बीज में मिलाकर रगड़ें और उसका उपयोग करें। इससे भी बीज का शोधन हो जाता है।

पौध बुआई / रोपाई का समय

बौने कालानमक की खेती खरीफ मौसम में ही की जानी चाहिये। इससे दाने की गुणवत्ता तथा स्वाद और सुगंध बनी रहती है। इसका बीज बोकर पौध उगाने का सबसे आदर्श समय जून के आखिरी सप्ताह से लेकर जूलाई के दुसरे सप्ताह तक होता है। इसके बाद रोपाई को जाती है, जिससे दाने की गुणवत्ता सर्वोत्तम होगी तथा पैदावार भी अच्छी मिलेगी। दाना बनते समय दिन का तापमान 25 से 30 डिग्री० सेल्सियस के बीच होनी चाहिये।

उन्नतशील प्रजातिया

पूसा नरेन्द्र काला नमक –1 पूसा सी ० आर० डी०–2 पूर्वांचल के लिए संस्तुत की गयी है इसके अलावा काला नमक 101, काला नमक 102, के.एन. 3 है।

पोषक तत्व एवं उनका प्रबंधन

बौना कालानमक की खेती में 120 किग्रा० नाइट्रोजन, 60 किग्रा0 फॉस्फोरस और 60 किग्रा० पोटाश की आवश्यकता हाती है।

नर्सरी प्रबन्धन

नर्सरी में भी गोबर की खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट आदि 50 क्विंटल प्रति हे० की दर से डालनी चाहिये। एक हे० में धान की खेती के लिए 0.1 ह० नर्सरी उगाने के लिए खेत पर्याप्त है, जिसमें 5 क्विंटल कम्पोस्ट डालनी चाहिये। नर्सरी उगाने की दो विधियां हैं–सूखी विधि और गीली विधि। सूखी विधि में खेत में पर्याप्त नमी तो होती है, किन्तु उसमें पानी नहीं होता। इसमें 10 से.मी. पर कतारें बनाकर उसमें सूखा या अंकुरित बीज बोया जाता है। बोने के बाद बीज को सूखी मिट्टी से ढक देना चाहिये। जिससे चूहे या चिडियों से इसका नुकसान न हो।

जमाव शुरू होने पर इसमें सिंचाई कर दी जाती है। गीली विधि में मिट्टी में खाद मिलाने के बाद पानी भरकर अच्छी तरह से पलेवा कर देते हैं। अंकुरित बीजों को इसमें छिटककर बुआई कर देते हैं। पानी सूखने पर बीज के ऊपर मिट्टी की हल्की परत अपने आप आ जाती है। इससे चिड़ियों से नुकसान होने का डर नहीं रहता। इससे अंकुरण होने के बाद यदि जस्ते की कमी दिखायी पड़े तो उसे 500 ग्राम जिंक सल्फेट में 250 ग्राम चूना प्रति हे० की दर से मिलाकर छिड़काव कर देते हैं। खरपतवार निकलने पर हाथ से इसकी निराई कर देनी चाहिए। जब पौध एक सप्ताह की हो जाये तो खेत में 2–3 सेमी. पानी लगातार रखना चाहिये। 3–4 सप्ताह की पौध रोपाई के लिये तैयार हो जाती है।

खेत की तैयारी

मुख्य खेत में यदि ढ़ेचा की हरी खाद लेनी है तो मई के अन्तिम सप्ताह में हल्की सिंचाई करके ऊँचा की बुआई करें। इसका बीज 50 किग्रा. प्रति हे० की दर से बोना चाहिये। जमाव के बाद यदि वर्षा नहीं होती है तो एक या दो सिंचाई करनी पड़ सकती है। 45 दिनों बाद ढैंचा को मिट्टी पलटने वाले हल या ट्रैक्टर चालित कल्टीवेटर से पलटकर खेत में पानी भर देते हैं। पलटने के एक सप्ताह बाद धान की रोपाई की जा सकती है। हरी खाद के लिए मूंग या उड़द का भी उपयोग किया जा सकता है। मूंग की फसल लगभग 60 दिनों में तैयार होती है और इसकी फलियां तोड़ने के बाद इसके पौधे को खेत में पलटकर हरी खाद बनायी जाती है। यदि केवल गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद डालनी है तो 60–100 क्विंटल गोबर की खाद या कम्पोस्ट रोपाई से पहले खेत में डालकर जुताई करनी चाहिये। अन्य जैविक खादें भी इसी प्रकार प्रयोग में लायी जा सकती है। ऐसा पाया गया है कि 2 क्विंटल प्रति हे० की दर से नीम की खली डालने से न केवल नाइट्रोजन मिलता है, वरन कीड़ों और

रोगों से भी बचाव होता है।

रोपाई

तीन–चार सप्ताह (21–25) दिन की पौध रोपाई के लिये तैयार हो जाती है। पौध उखाड़ने के बाद उसकी जड़ों को एजोस्पीरीलम या पीएसबी या पीएसएम के घोल में डुबोकर रोपाई करना अच्छा होता है। इसके लिये उपरोक्त जैविक दवाओं का 600 ग्राम कल्चर लेकर पानी में डालकर घोल बना लेते हैं। इस घोल में 2 से 3 मिनट तक जड़ों को डुबोने के बाद रोपाई की जा सकती है। रोपाई की दूरी कतार से कतार 20 सेमी. और पौधे से पौधे की दूरी 15 सेमी. रखी जाती है। एक स्थान पर दो या तीन पौध ही लगानी चाहिये। रोपाई करते समय खेत में थोड़ा पानी होना चाहिये और इसके सूखने के बाद पुनः दो से तीन सेमी. पानी भर देना चाहिये। ऐसा करने से पौध को 'रोपाई का झटका' नहीं लगता है और पौधों से तुरन्त नई जड़ें निकलकर बढ़ने लगती हैं। इसके अतिरिक्त, पोषक तत्वों का नुकसान नहीं होता तथा खरपतवार भी नहीं उगते हैं।

खरपतवार नियंत्रण

जैविक खेती में खरपतवार नियंत्रण के लिये रासायनिक दवाओं का प्रयोग नहीं किया जा सकता। अतः निराई अथवा खेती करने की विभिन्न क्रियाओं का ही उपयोग किया जाता है। रोपाई करने से पहले अच्छी तरह से खेत में पानी होना चाहिये। इससे सभी उगे हुये खरपतवार नष्ट हो जाते हैं। रोपाई के पश्चात यदि खेत में लगातार दो से तीन सेमी. पानी भरा रहे तो उससे नये खरपतवार नहीं उगते। रोपाई के पश्चात यदि नये खरपतवार उगते हैं, तो एक महीने के अंदर ही निराई करना अति आवश्यक है। धान के पौधों में एक महीने के बाद निराई की आवश्यकता नहीं पड़ती, क्योंकि इसकी निश्यतिक वृद्धि अधिक होती है, जिससे पौधे मिट्टी को पूर्णतया ढंक लेते हैं।

खरपतवार नियंत्रण के लिये कुछ अन्य विधियां भी प्रयोग की जाती हैं। उदाहरण के लिये गर्मी के दिनों में खेत की जुताई, हरी खाद की अच्छी फसल उगाना, मल्व का प्रयोग और अजोला उगाना। अजोला उगाने के लिये रोपाई के बाद इसके नये पौधे पूरी खेत में छिड़कते हैं, जो पानी के द्वारा फैलकर मिट्टी को ढंक लेते हैं। एक महीने के बाद ये स्वयं सड़कर खेत को खाद देते हैं तथा खरपतवार नहीं उगने देते। कतारों में रोपी हुई फसल में 'कोनोवीडर' नामक यंत्र चलाकर भी खरपतवार नष्ट किया जा सकता है। इस तरह से बौना कालानमक धान के खेत में अच्छी फसल उगाने पर केवल एक माह तक ही खरपतवार का नियंत्रण करना पड़ता है। एक अच्छी फसल, खरपतवार का नियंत्रण एक महीने बाद स्वयं कर लेती है।

रोगों का नियंत्रण

स्यूडोमोनास 10 ग्राम प्रति किग्रा. बीज का शोधन लाभदायक होता है। रोपाई से पहले स्यूडोमोनास अथवा ट्राइकोडर्मा (10 ग्राम/लीटर पानी) में पौधों को 10 मिनट डुबोकर रोपाई करने से भी आवरण गलन से बचाव होता है। रोपाई के बाद कल्ले निकलते समय इन दानों जैविक उत्पादों का छिडकाव करने से भी इस रोग पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

आवरण गलन (शीथ ब्लाइट): एक फफूंद (राईजेक्टोनिया सोलेनाई) जनित रोग है। यह रोग अधिकतम कल्ले निकलने की अवस्था में आता है, यह पत्ती के आवरण, पत्ती और निकलने वाली बालियों पर भी चकत्ते के रूप में दिखायी देता है। प्रारंभिक अवस्था में चकत्ते छोटे होते हैं किन्तु बाद में एक–दूसरे से मिलकर ये सांप की केंचुली जैसे हो जाते हैं। पत्तो का निचला हिस्सा सड़ने से पत्ती का ऊपरी भाग प्रायः पीला होकर सूख जाता है। ऊपरी पत्तियों में ऐसा होने से उपज में नुकसान होता है।

कीटों की रोकथाम

धान की फसल में अनेक कीट नुकसान पहुंचाते हैं। बौना कालानमक में तनाछेदक कीट अधिक लगता है। इसकी सुगंध से तनाछेदक कीट आकर्षित होता है। कुछ कीटों की रोकथाम के उपाय निम्न है–

तनाछेदक

तना छेदक कल्ले निकलने की अवस्था से ही नुकसान पहुंचाना शुरू करता है। जैसी ही कल्ले निकलने हैं इनके बढ़ने वाले अग्र भाग को तना छेदक मार देता है। इससे कल्ला एक–दो पत्ती निकलने के बाद ही बढ़ना बंद करके मर जाता है। तना छेदक का अगला नुकसान बाली निकलते समय होता है और तने की निचली गांठ के पास छेद करके तने को बेकार कर देता है। इससे निकलती हुई बाली भोजन की कमी से सफेद रंग की या सूखी निकलती है। ऐसी बालियों में

दाने नहीं बनते। चूंकि यह कीट कल्ले के अंदर ही होता है। अतः इसको मारना कठिन होता है।

तनाछेदक का नियंत्रण

• रोपाई करते समय पौधे की पत्तियों के ऊपरी हिस्से को तोड़कर इससे तना छेदक के अंड, जो पत्ती के ऊपरी भाग में ही होते हैं उनको खेत में पौधे की पत्तियों से तना छेदक के अंडे इकट्ठे करके नष्ट कर दिया जाता है।

• प्रारंभिक अवस्था में खेत में अधिक पानी न भरें।

• प्रभावित कल्लों और बालियों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें।

• रात में प्रकाश प्रपंच (लाइट–ट्रैप) लगाकर तनाछेदक के प्रौढ़ों को इकट्ठा कर नष्ट कर दें।

फसल पर बैसीलस थूरिनजीएनसिस (बीटी) 2.5 किग्रा. प्रति हे० अथवा एक प्रतिशत नीम का तेल खेत में छिड़क दें। इससे अंड़ देना और अंड़े से लार्वा का निकलना बंद हो जाएगा। चूंकि बौना कालानमक निचले खेतों में लगाया जाता है

पत्ती लपेटक कीट से सभी नुकसान होता है। अंडे से निकलने के बाद लार्वा अपने मुंह से एक चिपचिपा पदार्थ निकालकर पत्ती के दोनों किनारों को जोड़ देता है। लार्वा उसी के अंदर रहकर पत्ती के हरे पदार्थ को खुरच–खुरचकर खाता है। कीट फसल के पूरे जीवन चक्र में नुकसान पहुंचाता है। इसकी रोकथाम के लिए निम्न विधियां प्रयोग की जा सकती है–

• फसल के मध्य काल में खेत से पानी निकाल देना चाहिए।

• डंडे से फसल को अच्छी तरह से हिलाकर बंद पत्तियों को खोल दिया जाये। इससे लार्वा खेत में गिर जायेगा और वह दोबारा पत्ती में नहीं चिपक सकता।

• पांच प्रतिशत नीम के तेल का छिड़काव पत्ती को डंडे से पीटने के बाद किया जाये।

• रात में फसल पर प्रकाश प्रपंच (लाइट ट्रैप) लगाकर इनके वयस्कों को इकट्ठा करकर मार दिया जाये।

• ट्राइकोग्रामा कीट, जो पत्ती लपेटक कीट का शत्रु है, उसके कार्ड पर लगे हुय अंडे एक लाख प्रति हे0 की दर स 37वें, 44वें और 51वें दिन पर लगाये जाएं। इसके अतिरिक्त किसानों के मित्र कीट, मकड़ी और मक्खियां हैं, जो पत्ती लपेटक कीट को अपना भोजन बनाती है, को बढ़ावा देने के उपाय करने चाहिए।

• खेत के चारों तरफ घास तथा ऐसे पौधे न उगने दें। जो पत्ती लपेटक कीट को पालते (द्वितीयक पोषक) है।

गंधी कीट

नाम के अनुरूप यह कीट अत्यंत बदबूदार होता है। इससे बाली में दाना बनते समय ही नुकसान होता है। जिस समय दाने में दूध बनता रहता है उस समय यह दूध को पीकर दाने को खोखला कर देता है। यह कीड़ा आकार में तो बड़ा होता है, साथ में इसकी दुर्गन्ध से खेत में इसकी पहचान की जा सकती है। इसकी रोकथाम के निम्न उपाय प्रयोग में लाये जा सकते हैं।

• खेत के आसपास उगने वाली घास जैसे सावां घास, कंगनी और अन्य एकदलीय पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दिया जाये।

• अनेक किसानों के मित्र कीट जैसे–मकड़ी, जुलाहा कीट और अन्य प्रकार के बग, गंधी कीट के अंडों को खाकर इनकी आबादी घटाते हैं। इनको बढ़ावा देना चाहिये।

कटाई, मड़ाई और भंडारण

बौना कालानमक की फसल बाली निकलने के बाद 35–40 दिनों में पककर तैयार होती है। चूंकि कालानमक धान की भूसी का रंग काला होता है, अतः अपरिपक्व और परिपक्व दाने का एक ही रंग होता है। इस कारण दाने को देखकर फसल कटाई की तिथि निश्चित करना थोड़ा कठिन है। बाली निकलने के 35–40 दिनों से पहले इसकी कटाई नहीं करनी चाहिये। कटाई की तिथि निर्धारित करने की एक दूसरी विधि है, जब इसकी पत्तियां पूर्णरूप से सूख जाये तो फसल को कटाई के उपयुक्त समझना चाहिये। पहले कटाई करने से दाने परिपक्व नहीं होते हैं। इस कारण कटाई के समय चावल का रंग सफेद न होकर हरा होता है। कटाई के तुरन्त बाद ही इसकी मड़ाई करके दाना अलग कर लेना चाहये। दाने को अलग करके इसको तीन से चार दिन धूप में सुखाकर भंडारण कर लेना चाहिये। ध्यान रहे कि भंडारण के समय दाने में नमी 12 प्रतिशत से अधिक न हो। भंडारण ऐसे बोरे या कुठले में करें, जो हवा बंद हो। इससे दाने में सुगंध भरपूर बनी रहेगी।

तिल की वैज्ञानिक खेती

रामलखन सिंह, मनोज कुमार सिंह एवं मिथिलेश कुमार पांडेय

तिल खरीफ मौसम की एक मुख्य तिलरहनी फसल है। इसकी खेती कम लागत में करके अच्छी आय प्राप्त कर सकते हैं। तिल की खेती शुद्ध एवं मिश्रित रुप में की जाती है। इसकी खेती गुजरात, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, राजस्थान, आंध्र प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, पश्चिम बंगात्र आदि राज्यों में की जाती है। उत्तर प्रदेश में तिल की खेती मुख्यतः बुन्देलखण्ड की मुख्य रूप से राकड़, पड़वा एवं अच्छे जल निकास वाली काबर तथा मार भूमि में तथा मिर्जापुर, फतेहपुर, इलाहाबाद, आगरा, मैनपुरी आदि जनपदों में की जाती है। मैदानी क्षेत्रों में इसकी मिश्रित खेती ज्वार, बाजरा तथा अरहर के साथ की जाती है। उत्तर प्रदेश में तिल की खेती का क्षेत्रफल 3.64 लाख हेक्टेयर,उत्पादन 84407 मी.टन तथा उत्पादकता मात्र 2.33 कुंतल प्रति हेक्टेयर है। तिल में तेल की मात्रा लगभग 50 प्रतिशत पाई जाती है। देश के कुल तेल उत्पादन का लगभग 20 प्रतिशत अकेले उत्तर प्रदेश से प्राप्त होता है। तिल का तेल खाद्य सामग्री जैसे पूड़ी, सब्जी, लड्डू, गजक आदि के बनाने में किया जाता है। इसका तेल औषधियां बनाने में प्रयोग किया जाता है। वैज्ञानिक खेती अपनाकर तिल के उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

जलवायु

तिल लंबे एवं गर्म मौसम की फसल है। अच्छे जमाव व वानस्पतिक वृद्धि हेतु 20 डिग्री सेंटीग्रेड से अधिक तापमान उपयुक्त होता है।

खेत की तैयारी

इसकी खेती के लिए उत्तम जल निकास वाली दोमट भूमि उपयुक्त होती है। एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से व 2–3 जुताईयां कल्टीवेटर अथवा देशी हल से करना चाहिए। जुताई के समय 5 टन गोबर की सड़ी हुई खाद प्रति हैक्टेयर कि दर से खेत में मिलाना चाहिए।

बीज दर एवं बीज शोधनः बीज की मात्रा 3 से 4 किग्रा. प्रति हेक्टेयर क्षेत्र की दर से उपयुक्त है। बीज जनित रोगों से बचाव हेतु थीरम की 2 ग्राम मात्रा एवं कार्बेन्डाजिम की 4 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज शोधन करें।

बुआई का समय एवं विधि

बुआई का उपयुक्त समय जून के अन्तिम सप्ताह से जुलाई का दूसरा पखवारा है। पश्चिमी उ0प्र0 में इससे पूर्व बुआई करने से फाइलोडी रोग लगने का भय रहता

उन्नतिशील प्रजातियाँ

प्रजातियां	विशेषता	पकने की अवधि (दिनो में)	तेल प्रतिशत	उपज (कु.है.)	उपयुक्त क्षेत्र
टा–4	फलियाँ एकल, सन्मुखी बीज सफेद	90–100	40–42	6–7	मैदानी क्षेत्र
टा–2	फलियाँ एकल, सन्मुखी बीज सफेद	85–90	40–45	5–6	मध्य एवं पश्चिमी क्षेत्र
टा–3	फल्नियाँ एकल, सन्मुखी बीज सफेद	90–95	40–45	6–7	बुन्देलखण्ड क्षेत्र
टा–78	फल्नियाँ एकल, सन्मुखी	80–85	45–48	6–8	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
शेखर	फल्नियाँ एकल, सनन्मुखी	80–85	45–48	6–8	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
प्रगति	फल्याँ एकल, सनन्मुखी	80–85	45–48	7–9	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
तरूण	फल्याँ एकल, सन्मुखी	80–85	50–52	8–9	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
आर.टी. 351	बहुफलीय एवं सन्मुखी	80–85	50–52	9–10	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश

कृषि विज्ञान केंद्र, मनकापुर, गोण्डा–2

है। बुआई हल के पीछे पंक्तियों में 30 से 45 से.मी. की दूरी पर करें। बीज को 4 सेंटीमीटर गहराई पर बोयें। बीज का आकार छोटा होने के कारण बीज को रेत, राख या सूखी हल्की बलुई मिट्टी में मिलाकर बुवाई करें।

खाद एवं उर्वरकः मृदा परीक्षण की संस्तुति के अनुसार खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग करें। यदि परीक्षण न कराया गया हो तो 30 किग्रा. नत्रजन, 20 किग्रा. फास्फोरस तथा 20 किग्रा. गन्धक प्रति है। की दर से प्रयोग करें। राकड़ तथा भूड़ भूमि में 20 किग्रा. पोटाश प्रति हे. का भी प्रयोग करें। नत्रजन की आधी मात्रा एवं फास्फोरस, पोटाश तथा गंधक की पूरी मात्रा, बुवाई के समय बेसल्र ड्रेसिंग के रूप में तथा नत्रजन की शेष आधी मात्रा निराई– गुड़ाई के समय प्रयोग करें। जिप्सम की ढाई कुंतत्र मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से खेत की तैयारी करते समय खेत में मिलाने पर फसल में गंधक की पूर्ति हो जाती है। फसल में पुष्पावस्था तथा फली बनते समय 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का छिड़काव करने से पैदावार में वृद्धि होती है।

निराई–गुड़ाई

प्रथम निराई– गुड़ाई बुवाई के 15–20 दिनों बाद तथा दूसरी निराई –गुड़ाई बुवाई के 30–35 दिन बाद करें। निराई–गुड़ाई करते समय अतिरिक्त पौधों की थिनिंग (विरलीकरण) करके पौधा से पौधा के बीच की दूरी 40 से 42 सेमी. कर लें। एलाक्लोर 50 ई.सी. की 4.25 लीटर मात्रा या पेंडीमेथलीन 30 ईसी की 3.30 लीटर मात्रा को प्रति है० की दर से 500 लीटर पानी में घोत्न बनाकर बुवाई के 24 घण्टे के अन्दर खेत में छिड़काव करने से खरपतवारों का जमाव नहीं होता है।

सिचाईः पौधों में 50–60 प्रतिशत फली लगने की अवस्था में नमी की कमी होने पर सिंचाई करना चाहिए।

कटाई–मड़ाईः जब फलियों का रंग पीला पड़ जाये, उस समय फसल की कटाई करना चाहिए। फसल की कटाई करके बण्डल बनाकर खलिहान में ऊर्द्धाकार रखें। बण्डल सूख जाने पर पक्के फर्श या तिरपाल पर तिल की मड़ाई करें। गोबर की लिपाई किये खलिहान में मड़ाई न करें, इससे तिल की गुणवत्ता खराब हो जाती है।

फसल सुरक्षा

कीट

पत्ती व फल की सूण्डीः इनकी सूँडियाँ कोमल पत्तियों तथा फल्नियों को खाती है तथा जाला बनाकर बाँध देती हैं।

जैसिडः पत्तियों का रस चूसते हैं। कीट का प्रकोप ज्यादा होने पर पत्तियां सूख कर गिर जाती हैं।

रोकथाम

उपरोक्त कीटों की रोकथाम के लिये निम्न में से कोई एक कीटनाशी रसायन का छिड़काव करना चाहिए। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 100 मिली क्यूनालफास 25 ई.सी. 4.25 ली. मेसीटाम्प्रिड 100 ग्राम/हे. की दर से 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

रोग

फाइलोडीः यह रोग माइकोप्लाजमा द्वारा होता है। इस रोग में पौधों का पुष्प विन्यास पत्तियों के विकृत रूप में बदलकर गुच्छेदार हो जाता है। इस रोग का वाहक कीट फुदका है।

उपचार

तिल की बुवाई समय से पहले न करें। बुआई के समय कूंड़ में कारटाप हाइड्रोक्लोराइड 20 किग्रा/हे. की दर से प्रयोग करें। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 250 मिली मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिये।

फाइटोफ्थोरा झुलसा

इस रोग में पौधों के कोमल भाग व पत्तियां झुलस जाती हैं।

उपचार

इसकी रोकथाम हेतु कापर आक्सीक्लोराइड की 3.0 किग्रा. मात्रा या मैंकोजेब की 2.50 किग्रा. मात्रा को प्रति हे. की दर से आवश्यकतानुसार छिड़काव करना चाहिये।

अरहर की एकीकृत फसल प्रबन्धन

राम जीत', राम गोपाल'' एवं विद्या सागर'''

भारत में उगायी जाने वाली दलहनी फसलों में चना के बाद अरहर दूसरी महत्वपूर्ण फसल है। इस दलहनी फसल की महत्ता केवल प्रचुर मात्रा में प्रोटीन (20–22%) की उपलब्धता से ही नही बल्कि इसके पौधे से प्राप्त होने वाला भूसा (सूखी पत्तियाँ) और इससे मिलने वाली लकड़ी से भी है। प्रोटीन की प्रचुर मात्रा होने के कारण शाकाहारी भोजन में अरहर की दाल का बहुत महत्व है। इससे मिलने वाला भूसा (सूखी पत्तियाँ) पशुओं के चारे के लिए प्रयोग की जाती है। और इसकी लकड़ी गांवों में ईधन के रूप में, डलिया बनाने में और छप्पर बनाने में प्रयुक्त की जाती है। उपरोक्त गुणों के अलावा अरहर में पौधे से गिरने वाली पत्तियाँ मिट्टी में मिलकर खेत की उत्पादकता को भी बढ़ाती है।

हमारे देश के उत्तरी भाग में अरहर की दो फसलें जिसे अगेती अरहर भी कहते हैं की बुवाई जून के प्रथम पखवाड़े मे ंकी जाती है और नवम्बर के प्रथम पखवाड़े मे काट ली जाती है। दूसरी फसल जिसे हम पिछेती अरहर कहते है, की बुवाई मानसून आने पर 20 जुलाई तक की जा सकती है। और इसकी कटाई 20 अप्रैल तक कर ली जाती है। अगेती अरहर द्विफसली पद्धति के लिए और पिछेती अरहर मिश्रित फसली पद्धति के लिए उपयुक्त है। अगेती अरहर की कटाई के उपरान्त उसी खेत में गेहूँ की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। विगत कुछ वर्षों में ऐसी प्रजातियों का विकास किया गया है। जो लगभग 4–5 महीने में तैयार हो जाती हैं और द्विफसली पद्धति के लिए उपयुक्त होती हैं। पिछेती अरहर के साथ ज्वार, बाजरा, मक्का, तिल और उर्द तथा मूंग में से किसी भी फसल की मिश्रित खेती की जा सकती है। इसकी परम्परागत प्रजातियाँ लगभग 8–10 महीने में पककर तैयार होती है। जो कि मिश्रित खेती के अनुकूल होती है।

भूमि का चुनाव

अरहर की उन्नत खेती के लिए सही भूमि का चुनाव बहुत ही महत्वपूर्ण है। अरहर उगाए जाने वाले खेत में जलनिकास की समुचित सुविधा होनी चाहिए। इसकी खेती के लिए हल्की दोमट भूमि सर्वोत्तम है। मिट्टी की जांच जरूर करायें क्योकिं खेत अधिक क्षारीय या ऊसरीला नहीं होना चाहिए अन्यथा अरहर की जड़ों में पाए जाने वाले जीवाणुओं का विकास नहीं होगा। ये जीवाणु वातावरण में पाये जाने वालें नाइट्रोजन का खेत में स्थिरीकरण करते है तथा फसल को नाइट्रोजन की कुल आवश्यकता के आधे से अधिक भाग का स्थिरीकरण स्वयं ही कर देते है।

भूमि की तैयारी

अरहर बोये जाने वाले खेत की मई के महीने में 15 दिन के अन्तराल पर दो बार मिट्टी पलटने वाले हल से जोतकर खुला छोड़ देना चाहिए, जिससे कि खेत में उपस्थित हानिकारक कीटों के अण्डे और लारवा तथा फफूंदी आदि सूर्य की तपती गरमी से मर जायें। अगेती फसल की खेती के लिए जून के प्रथम सप्ताह में पलेवा करके ओट आने पर कल्टीवेटर से तीन जुताई करके पाटा लगाकर खेत को तैयार कर लेना चाहिए। पिछेती फसल की खेती के लिए जुलाई के प्रथम सप्ताह में खेत को तैयार कर लेना चाहिए। दोनों ही फसलों की बुवाई यदि खेत में मेड़ पर की जाये तो अधिक वर्षा से लगने वाले फाइटाफ्थोरा तना अंगमारी रोग से फसल को बचाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त अनावश्यक पानी कूंडो से होता हुआ खेत के बाहर निकल जाता है।

बुवाई का समय

अगेती अरहर की बुवाई किसी भी हाल मे 15 जून तक अवश्य कर लेनी चाहिए। किसी भी हालत में जून के प्रथम पखवाड़े के बाद बुवाई न करें। प्रथम पखवाडे के बाद बुवाई करने से गेहूं या रबी का दूसरी फसल की बुवाई में विलम्ब होगा और पैदावार कम हो जायेगी। पिछैती अरहर की बुवाई 20 जुलाई तक कर लेनी चाहिए।

बीज की मात्रा

अगेती अरहर के लिए 12–15 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से तथा पिछेती अरहर के लिए 10–12 कि.ग्रा. प्रति

'वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, ''विषय वस्तु विशेषज्ञ (शस्य) '''विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु पालन), कृषि विज्ञान केन्द्र, पांती, अम्बेडकर नगर एवं '''कृषि विज्ञान केन्द्र, अयोध्या, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक वि0वि0कुमारगंज अयोध्या उ0प्र0

हेक्टेयर की दर से बीज की बुवाई की जानी चाहिए। प्रमाणित बीज का प्रयोग करने से जमाव अच्छा होता है। तथा फसल की पैदावार अच्छी होती है।

बीज शोधन एवं बीजोपचार

दोनों फसलों की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए बुवाई के पहले बीजों का शोधन अत्यन्त आवश्यक है। बुवाई के पहले बीजों को शोधित कर लेने से फसल में लगने वाले फफूंद जनित रोगों को नियंत्रित किया जा सकता है। बीज शोधन के लिए कैप्टान या थीरम आदि का 3 ग्राम/कि.ग्रा बीज दर से प्रयोग किया जाता है। नवीन अनुसंधान से यह पता चला है कि यदि बीज को बुवाई से पहले ट्राइकोडर्मा नामक जैविक कवकनाशी से उपचारित कर लिया जाय तो उकठा रोग का प्रकोप नियंत्रित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त यदि बीज को उपयुक्त राइजोबियम कल्चर (राइजोबियम लेग्यूमिनेसोरम) से उपचारित कर लिया जाये तो इससे उत्पादन में 10–12% तक की वृद्वि हो जाती है। बीज को राइजोबियम कल्चर से उपचारित करने से पौधों की जड़ो की गाँठों में पाए जाने वाले जीवाणु पर्याप्त संख्या में रहते हैं, जो कि वायुमण्डल की नाइट्रोजन को भूमि में स्थिर करते हैं और उत्पादन वृद्धि में सहायक होते हैं। अतः बुवाई करने से पहले उचित राइजोबियम कल्चर से बीज उपचारित करना न सिर्फ अरहर, बल्कि अगले फसल के लिए भी लाभदायक होता है।

बुवाई की विधि

दोनों ही फसलों की बुवाई मेड़–कूंड बनाकर मेड़ पर करनी चाहिए। इससे बरसात के अधिक पानी का पौधे पर प्रतिकूल असर नहीं पड़ता है। अरहर में लगने वाले फाइटोफ्थेरा तना अंगमारी रोग से फसल को बचाया जा सकता है तथा अधिक वर्षा होने पर अतिरिक्त पानी कूंड़ो से होता हुआ खेत से बाहर निकल जाता है। अगेती अरहर के लिए मेड़ से मेड़ की दूरी 60 सेंमी. तथा मेड़ पर पौधे से पौधे की दूरी 20 सेमी. होनी चाहिए। पिछेती अरहर के लिए मेड़ से मेड़ की दूरी 80 सेमी. तथा मेड़ पर पौधे से पौधे की दूरी 25 सेमी. होनी चाहिए।

उर्वरक की मात्रा एवं प्रयोग विधि

अरहर की दोनों ही फसलों में उर्वरकों का प्रयोग करने से पहले मृदा परीक्षण के नतीजों के आधार पर ही उर्वरकों की उचित मात्रा खेत में डालनी चाहिए। वैसे दोमट भूमि वाले सामान्य खेत में 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 40 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 40 कि.ग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। इसके अतिरिक्त 20 किग्रा. जिंक सल्फेट या 20 किग्रा. गन्धक प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। लगभग 100 किग्रा. डी.ए.पी. प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने पर नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की आवश्यक मात्रा खेत को प्राप्त हो जाती है। दलहनी फसलों में जिंक और गंधक के प्रयोग से उत्पादन में बढोत्तरी दर्ज हो गई है। जिंक सल्फेट के प्रयोग से पौधे को जिंक एवं सल्फर दोनों की पूर्ति हो जाती है, पर इसका प्रयोग फास्फोरस उर्वरक के साथ मिलाकर नहीं करें। इन उर्वरकों को खेत में बुवाई से पहले मेढ़ बनाने पहले समान रूप से बिखेर देना चाहिए।

खरपतवार की रोकथाम

खरीफ में उगायी जाने वाली फसलों में खरपतवार का प्रकोप अत्यधिक होता है। अरहर में मोथा, पथरी, लहसुआ आदि खरपतवारों का प्रकोप बहुतायत से होता है। जिससे अगेती फसल में 90% तथा पिछेती फसल मे 50% तक उत्पादन में कमी पायी गयी है। अरहर की दोनों फसलों में बुवाई के 30 दिन और 60 दिन बाद क्रमशः दो निकाई अवश्य करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त बुवाई के दूसरे दिन पेन्डी–मेथिलीन 3.30 लीटर/हेक्टेयर या आक्सीफ्लूरोफेन 100 मिली /हेक्टेयर की दर से छिड़काव कर देने से चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार जैसे पथरी, लहसुआ आदि का प्रकोप समाप्त हो जाता है। खरपतवार प्रबंधक के बुवाई के 15 से 18 दिन पर इमिजायफर एस.एल का 1000 मिली/हे. की दर से स्प्रे करें।

सिंचाई

समान्तयाः अरहर की अगेती फसल में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पडती, परन्तु यदि फसल की बुवाई के बाद तीन सप्ताह तक वर्षा नहीं होती है, तो एक सिंचाई प्रथम निकाई के पहले कर देना चाहिए। सिंचाई के बाद खेत में पानी 2 घंटे से अधिक देर तक नही जमा रहना चाहिए तथा अतिरिक्त पानी को कूड़ो के रास्ते खेत से बाहर निकाल देना चाहिए। कम वर्षा होने से खेत मे नमी की कमी हो गयी हो तो पिछेती फसल में एक सिंचाई जनवरी के प्रथम सप्ताह में कर देने से फसल पाले के प्रकोप से बच जाती है।

प्रजातियाँ

अगेती अरहर की उन्नत प्रजातियाँ

क्र.	प्रजाति	पकने की अवधि (दिनों में)	उपज क्षमता (क्विंटल / हे.)	संस्तुत क्षेत्र
1.	यू.पी.ए.एस.–120	120–150	15–18	बिहार, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, एवं दिल्ली
2.	पूसा – 992	125–235	12–18	पश्चिम, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली एवं पंजाब
3.	मानक	120–130	12–15	पश्चिम उत्तर प्रदेश एवं हरियाणा
4.	ए.एल.–201	140–150	12–15	पंजाब
5.	जागृति	110–150	12–15	पश्चिम उत्तर प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली एवं पंजाब

पिछेती अरहर की उन्नत प्रजातियाँ

क्र.	प्रजाति	पकने की अवधि (दिनों में)	उपज क्षमता (क्विंटल / हे.)	संस्तुत क्षेत्र
1.	बहार	245–265	25–28	बिहार, उ.प्र. एवं झारखण्ड
2.	नरेन्द्र अरहर –1	260–280	25–28	बिहार, उ.प्र. एवं झारखण्ड
3.	मालवीय अरहर–6	255–275	25–27	बिहार, उ.प्र. एवं झारखण्ड
4.	मालवीय अरहर–13	230–240	22–24	बिहार, उ.प्र. एवं झारखण्ड
5.	नरेन्द्र अरहर 2	240–260	28–30	बिहार, उ.प्र. एवं झारखण्ड
6.	आई.पी.ए. 203	240–245	20–25	बिहार, उ.प्र. एवं झारखण्ड

कटाई

दोनो ही फसलों के कटाई तब करते है जब अधिकांश फलियों का छिलका सूख जाता है तथा फली के अन्दर दाने गहरे रंग के हो जाते है। समय से बोयी गयी अगेती फसल में यह दशा 135 से 145 दिन में आ जाती है तथा पिछेती फसल में बुवाई के 240 से 270 दिन में आती है। कटाई के बाद फसल के बोझों को बांधकर खड़ा कर देना चाहिए तथा तने और पत्तियों के पूरी तरह से सूखने के प्रतीक्षा करनी चाहिए।

मड़ाई

अरहर के बोझ में बंधे पौधों के पूरी तरह से सूख जाने के बाद दो–तीन पौधों को एक हाथ में पकड़ कर दूसरे हाथ से डंडे के द्वारा फलियो वाले हिस्से पर पीटने से फलियां वाले हिस्से पर पीटने से फलियां फट जाती है और दानें अलग गिर जाती है उन्हें डंडे से पीटकर दाने को अलग कर लिया जाता है। यदि उचित वेग से हवा न चल रही हो तो बिनोवर की सहायता से हल्के भूसे को उड़ाकर दानों को साफ कर लिया जाता है।

भंडारण

अरहर के दानों को भंडारण से पहले धूप में सुखा लेना चाहिए जिससे कि अतिरिक्त नमी सूख जाय और नमी की मात्रा 9–10% ही रह जाय। सूखे हुए दानों को सीड बिन या बखार में भर देना चाहिए और बिन या बुखारी का मुंह इस तरह से बन्द कर देना चाहिए कि बाहर से हवा या नमी अन्दर न जाने पायें। यदि संभव हो तो सल्फास की एक या दो टिकिया कपड़े में बांधकर सीडबीन या बुखारी में दानों के बीच में रख देना चाहिए। इस तरह भण्डारण करने के बीज मे कीट का प्रकोप नहीं होता है।

मडुआ (रागी) की उन्नत खेती

अंगद प्रसाद', लाल पंकज कुमार सिंह'', विनय कुमार सिंह'''

भारत में इसे विभिन्न नामों से जाना जाता है। मडुआ को कन्नड़ में रागी, गुजराती में नगली, पंजाबी में मंडाल, बांग्ला में मरूआ, मराठी में नागली तथा उड़िया में मडिया कहा जाता है। इसका वानस्पतिक नाम इल्यूसाइन कोरेकाना है। अंग्रेजी में इसे फिंगर मिलेट्स के नाम से जाना जाता है। रागी की खेती मोटे अनाज के रूप में की जाती है। इसके पौधे सामान्य तौर पर 1–1.5 मी. की ऊँचाई के पाए जाते हैं। इसके दानों में खनिज पदार्थों की मात्रा बाकी अनाज वाली फसलों से ज्यादा पायी जाती है। इसके दानों का प्रयोग खाने में कई तरह से किया जाता है। इसके दानों को पीसकर आटा बनाया जाता है जिससे मोटी डबल रोटी, साधारण रोटी और डोसा बनाया जाता है। इसके अलावा मधुमेह रोगियों के लिए यह विशेष रूप से उपयोगी है। मधुमेह पीड़ित व्यक्तियों के लिए चावल के स्थान पर मडुआ का सेवन उत्तम माना जाता है।

रागी में पाये जाने वाले पोशक तत्व–

रागी में प्रचुर मात्रा में कई पोशक तत्व पाये जाते हैं। रागी में सबसे ज्यादा पाये जाने वाले पोशक तत्व कैल्शियम, कार्बोहाइड्रेट, पोटैशियम, रेशा, फास्फोरस और प्रोटीन है। इसमें अमीनो अम्ल, मिथयोनिन, आयरन, जिंक, मैग्नीशियम, विटामिन बी काम्पलेक्स आदि भी उचित मात्रा में पाये जाते हैं।

रागी का पोषण मान (प्रति 100 ग्राम)

पोषक तत्व	प्रति 100 ग्राम
प्रोटीन	7.3 ग्राम
वसा	9.3 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	72 ग्राम
खनिज	2.7 ग्राम
कैल्शियम	3.44 ग्राम
रेशा	3.6 ग्राम
ऊर्जा	328 किलो कैलोरी

रागी की खेती के लिए शुष्क जलवायु की जरूरत होती है। अधिक वर्षा वाले स्थानों में इसे ऊँचे खेतों में ही बोया जाता है। धान के क्षेत्रों में सूखा पड़ने पर रागी की फसल लगायी जाती है और रागी उत्पादन करने वाले क्षेत्रों में अधिक वर्षा होने पर धान को बोया जाता है। इसी कारण कहावत है कि धान और रागी एक साथ नहीं होता, अर्थात जिस वर्ष धान अच्छा होता है उस वर्ष रागी नहीं और जब रागी होती है तब धान अच्छा नहीं होता है। इसके बीज अंकुरण के लिए 24 सेन्टीग्रेड तापमान उपयुक्त होता है। फूल आने की अवस्था पर 10–12 घण्टे प्रकाश अवधि की आवश्यकता होती है। भारत में इसकी खेती उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और दक्षिण पूर्वी राज्यों में की जाती है। इसकी खेती किसानों के लिए अधिक लाभ देने वाली मानी जाती है।

भूमि–

कहा जाता है कि जहॉ कुछ भी नहीं होता वहॉ रागी हो सकती है। रागी की खेती मुख्य रूप से हल्की लाल या राख के रंग की दोमट तथा बलुई दोमट मिट्टी में होती है। उत्तम जल निकास वाली दोमट मिट्टी से लेकर हल्की दोमट भूमि रागी की खेती के लिए उपयुक्त होती है। मृदा में नमी धारण करने की क्षमता होनी चाहिए।

भूमि की तैयारी –

पूर्व फसल की कटाई के पश्चात् आवश्यकतानुसार ग्रीष्म ऋतु में एक या दो गहरी जुताई करें एवं खेत से फसलों एवं खरपतवार के अवशेष एकत्रित करके नष्ट कर दें। मानसून प्रारम्भ होते ही खेत की एक या दो जुताई करके पाटा लगाकर समतल करें।

बीज दर एवं बुवाई का समय–

बीज का चुनाव मृदा की किस्म के आधार पर करें। जहाँ तक संभव हो प्रमाणित बीज का प्रयोग करें। यदि किसान स्वयं का बीज उपयोग में लाता है तो बुवाई पूर्व बीज साफ करके फफूँदनाशक दवा (कार्बेन्डाजिम/कार्बोक्सिन) से उपचारित करके बोए। रागी की सीधी बुवाई अथवा रोपाई पद्धति से बुवाई की जाती है। सीधी बुवाई जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई मध्य तक मानसून वर्षा होने पर की जाती है। कतार में बुवाई करने हेतु बीज दर 8 से 10 किग्रा प्रति हेक्टेयर एवं छिटकवा पद्धति से बुवाई करने पर बीज दर 12–15 किग्रा प्रति हेक्टेयर रखते है। कतार पद्धति में दो कतारों के बीच की दूरी 22.5 सेमी एवं पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी रखे। रोपाई के लिए नर्सरी में बीज

विशय वस्तु विशेशज्ञ (शस्य विज्ञान) विशय वस्तु विशेशज्ञ (फसल सुरक्षा) वरिश्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृशि विज्ञान केन्द्र, मऊ

जून के मध्य से जुलाई के प्रथम सप्ताह तक डाल देना चाहिए। एक हेक्टेयर खेत में रोपाई के लिए बीज की मात्रा 4 से 5 किग्रा लगती है एवं 25 से 30 दिन की पौध होने पर रोपाई करनी चाहिए। रोपाई के समय कतार से कतार व पौधे से पौधे की दूरी क्रमशः 22.5 सेमी व 10 सेमी होनी चाहिए।

उन्नतशील किस्में–

रागी की विभिन्न अवधि वाली निम्न किस्मों को उत्तर प्रदेश के लिए अनुशंसित किया गया है–

1. जी.पी. यू.–45– यह रागी की जल्दी पकने वाली नयी किस्म है। इस किस्म के पौधे हरे होते है जिसमें मुड़ी हुई बालियाँ निकलती है। यह किस्म 104 से 109 दिन में पककर तैयार हो जाती है एवं इसकी उपज क्षमता 27 से 29 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है यह किस्म झुलसा रोग के लिए प्रतिरोधी है।

2. चिलिका (ओ.ई.बी.–10)– देर से पकने वाली किस्म के पौधे ऊँचे, पत्तियां चौड़ी एवं हल्के हरे रंग की होती है। बालियों का अग्रभाग मुड़ा हुआ होता है। प्रत्येक बाली में औसतन 6 से 8 अंगुलियां पायी जाती है। दाने बड़े तथा हल्के भूरे रंग के होते हैं। इस किस्म के पकने की अवधि 120 से 125 दिन व उपज क्षमता 26 से 27 कुन्तल प्रति हेक्टेयर होती है। यह किस्म झुलसा रोग के लिए मध्यम प्रतिरोधी तथा तना छेदक कीट के लिए प्रतिरोधी है।

3. शुब्रा (ओ.यू. ए. टी. – 2)– इस किस्म के पौधे 80–90 सेमी ऊँचे होते है जिसमें 7–8 सेमी लम्बी 7–8 अंगुलिया प्रत्येक बाली में लगती है। इस किस्म की औसत उत्पादक क्षमता 21 से 22 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। यह किस्म सभी झुलसा के लिए मध्यम प्रतिरोधी तथा पर्णछाद झुलसा के लिए प्रतिरोधी है।

4. बी. एल. –149– इस किस्म के पौधों की गांठे रंगीन होती है। बालियाँ हल्की बैगनी रंग की होती है एवं उनका अग्रभाग अंदर की ओर मुड़ा हुआ होता है। इस किस्म के पकने की अवधि 98 से 102 दिन व औसत उपज क्षमता 20 से 25 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। यह किस्म झुलसा रोग के लिए प्रतिरोधी है।

खाद एवं उर्वरक का प्रयोग–

मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग सर्वोत्तम होता है। असिंचित खेती के लिए 40 किग्रा नत्रजन व 40 किग्रा फास्फोरस प्रति हेक्टेयर की दर से अनुशंसित है। नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फोरस की पूरी मात्रा बुवाई पूर्व खेत में डाल दें तथा नत्रजन की शेष मात्रा पौध अंकुरण के 3 सप्ताह बाद प्रथम निराई के उपरांत समान रूप से डाले। गोबर अथवा कम्पोस्ट खाद (100 कुन्तल प्रति हेक्टेयर) का उपयोग अच्छी उपज के लिए लाभदायक पाया गया है। जैविक खाद एजोस्पाइरिलम ब्रेसीलेन्स एवं एस्परजिलस अवामूरी से बीजोपचार 25 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से लाभप्रद पाया गया है।

अन्तः सस्य क्रियाएं–

रागी की फसल को बुवाई के बाद प्रथम 45 दिन तक खरपतवारों से मुक्त रखना आवश्यक है अन्यथा उपज में भारी गिरावट आ जाती है। अतः हाथ से एक निदाई करें अथवा बुवाई या रोपाई के 3 सप्ताह के अंदर 24–डी सोडियम साल्ट (80 प्रतिशत) की एक किया मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करने से चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार नष्ट किये जा सकते हैं। बालियाँ निकलने से पूर्व एक निराई करे।

फसल पद्धति–

रागी की 8 कतारों के बाद अरहर की दो कतार बोना लाभदायक पाया गया है।

पौध संरक्षण–

1.रोग–व्याधियाँ– फफूँदजनित झुलसन एवं भूरा धब्बा रागी की प्रमुख रोग व्याधियां है जिनका समय पर निदान उपज में हानि रोकता है।

1.1 झुलसा– रागी की फसल पर पौध अवस्था से लेकर बालियों में दाने बनने तक किसी भी अवस्था में फफूँदजनित झुलसा रोग का प्रकोप हो सकता है। संक्रमित पौधे की पत्तियों में भिन्न–भिन्न माप के आँख के समान या तर्कुरूप धब्बे बन जाते हैं, जो मध्य में धूसर व किनारों पर पीले भूरे रंग के होते हैं। अनुकूल वातावरण में ये धब्बे आपस में मिल जाते हैं व पत्तियों को झुलसा देते हैं। बालियों की ग्रीवा व अंगुलियों पर भी फफूंद का संक्रमण होता है। ग्रीवा का पूरा या आंशिक भाग काला पड़ जाता है, जिससे बालियाँ संक्रमित भाग से टूटकर लटक जाती है या गिर जाती है। अंगुलियां भी आंशिक रूप से या पूर्णरूप से संक्रमित होने पर सूख है जिसके कारण उपज की गुणवत्ता व मात्रा प्रभावित होती है।

रोकथाम – बुवाई पूर्व बीजों को फफूँदनाशक दवा मैंकोजेब कार्बेन्डाजिम या कार्बोक्सिन या इनके मिश्रण से 2 ग्राम प्रति किग्रा बीज दर से उपचारित करें। खड़ी फसल पर लक्षण दिखायी पड़ने पर कार्बेन्डाजिम या

(शेष पृष्ठ 14 पर)

औषधीय फसल अश्वगंधा की खेतीः अतिरिक्त आय का श्रोत

सियाराम', आर. के. आन्नद'' एवं एस.के. वर्मा'''

अश्वगंधा का वैज्ञानिक नाम विदानिया सोमनिफेरा है। यह एक महत्वपूर्ण औषधि के साथ– साथ एक नकदी फसल भी है। अश्वगंधा का पौधा बहुवर्षीय, झाड़ीनुमा, बहुशाखायुक्त 40–100 सेमी. तक लम्बा होता है। इसके पत्ते बैगन के पत्तों के समान अण्डाकार रेसायुक्त होते हैं। यह फसल हल्की वर्षा पर आधारित होने के कारण इसका महत्व और बढ़ जाता है। इसकी जड़ों का महत्व उसमें पाये जाने वाले पादप रसायन के कारण होता है। जड़ों में 0.13 से 0.31 प्रतिशत तक एल्कोलाइड का 35 से 40 प्रतिशत तक होता है। इसमें सबसे महत्वपूर्ण विदानिन एल्केलाइड है जो कुल एल्केलाइड का 35 से 40 प्रतिशत तक होता है। इसके अतिरिक्त जड़ों में सोमनेफेरिन, सोमिन, विदानिन सहित लगभग 13 एल्केलाइड्स पाये जाते हैं। इनकी जड़ों मे स्टार्च, शर्करा व प्रोटीन पाई जाती है साथ ही हेन्ट्रिएकोन्टेन, एल्केलाइड्स, विदनियोल अम्ल व कुछ मुक्त अमीनो अम्ल भी पाये जाते हैं। पत्तियों में लगभग 12 प्रकार के विदानोलाइड्स पाये जाते हैं जिनमें विदाफेरिन–ए सबसे महत्वपूर्ण है। इसमें एन्टीबायोटिक व एन्टीट्यूमर गुण रहते है। इसके पौधे, सूखी जड़ें आयुर्वेदिक व यूनानी औषधियों के बनाने के काम आती है। अश्वगंधा की जड़ों से विविध आयुर्वेदिक योग एवं दवाइयां निर्मित की जाती है उनमें से अश्वगंधारिष्ट एक है। इसकी 8–10 ताजी पत्तियों को प्रातः खाली पेट चबाने से मोटापा कम करने में सहायता मिलती है।

अश्वगंधा की खेती भारत के पश्चिमोत्तर भाग राजस्थान, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, पंजाब, गुजरात, उत्तर प्रदेश एवं हिमालय प्रदेश आदि में बहुतायत से की जा रही है। मध्य प्रदेश तथा राजस्थान के कुछ भागों में वृहद स्तर पर इस फसल की खेती की जाती है। इन्हीं क्षेत्रों से सम्पूर्ण देश में इसकी व्यवसायिक आपूर्ति होती है। इसकी खेती को उत्तर प्रदेश में सफलतापूर्वक किया जा सकता है, जिसकी अपार सम्भावनायें हैं। राज्य सरकार के कृषि विभाग एवं उद्यान विभाग को इसके औषधीय गुणों तथा कम लागत में अधिक लाभ देने की महत्ता को देखते हुए क्षेत्रफल बढ़ाने हेतु किसानों को विशेष सुविधा के साथ–साथ इसके उत्पाद की विपणन व्यवस्था पर भी विशेष ध्यान आकर्षित करना होगा।

औषधीय उपयोग

- पौधों की जड़ें बलकारक, पौष्टिक एवं शुक्राणु वर्धक होती है।
- जड़ों का आधा चम्मच पाउडर दिन में दो बार लेने से खांसी ठीक हो जाती है साथ ही अस्थमा में भी लाभदायक है।
- पौधे की 5 ग्राम सूखी जड़ों का दूध में बना काढ़ा दिन में दो बार सुबह एवं शाम लेने पर स्त्रियों की बीमारियों जैसे– श्वेत प्रदर, अधिक रक्त स्राव एवं गर्भपात में काफी लाभ पहुंचता है।
- सूखी जड़ों का पाउडर गर्म पानी अथवा दूध के साथ लेने पर तंत्रिका तंत्र सम्बन्धित कमजोरी में उपयोगी सिद्ध होता है।
- गठिया, जोड़ों के दर्द में 5 ग्राम पाउडर सुबह शाम गर्म पानी के साथ एक माह तक लेने से काफी राहत मिलती है।
- अल्सर, सूजन, मोच एवं घाव में ताजी जड़ों अथवा पत्तियों को पीसकर लेप लगाने तथा एक ग्राम सूखा पाउडर पानी अथवा दूध के साथ सेवन करना लाभप्रद होता है।
- नपुंसकता में पौधे की जड़ों का एक चम्मच पाउडर दूध, शहद अथवा घी के साथ दिन में दो बार तीन माह तक सेवन करने से काफी लाभ होता है।
- पौधे की जड़ें जलोदर, पेट व फेफड़ों की जलन में भी बहुत उपयोगी होती है।
- विभिन्न त्वचा सम्बन्धी रोगों में भी पौधों की जड़ें बहुत लाभदायक होती है।

भूमि एवं जलवायु

अश्वगंधा की अधिक पैदावार लेने के लिए अच्छे जल निकास वाली बलुई, बलुई दोमट, लाल मिट्टी जिसका पी.एच. मान 7.0 से 8.0 हो, सर्वोत्तम होती है। यह एक पछेती खरीफ फसल है, जिसे 650 से 750 मिमी. वर्षा वाले क्षेत्रों में उत्पादित किया जा सकता है। इसकी अच्छी फसल के लिए बुवाई के समय शुष्क मौसम तथा मिट्टी मे प्रचुर मात्रा में नमी होनी चाहिए।

'सहप्राध्यापक/विषय वस्तु विशेषज्ञ (शस्य विज्ञान), ''वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, अमेठी, '''वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष कृषि विज्ञान केन्द्र, पचपेड़वा, बलरामपुर

रबी पूर्व या शरद ऋतु में वर्षा होने पर इसकी जड़ों में वृद्धि तथा पैदावार में गुणात्मक सुधार आ जाता है। शुष्क कृषि हेतु अश्वगंधा सर्वोपयुक्त औषधीय फसल है।

उन्नत किस्में एवं उपलब्धता

अश्वगंधा की कुछ उन्नत किस्में विकसित की जा चुकी हैं। इनमें से डब्ल्यू एस 20, डब्ल्यू एस 134, पोशिता जवाहर अश्वगंधा 134, खीमेप, प्रताप राज विजय अश्वगंधा 100, अर्का अश्वगंधा सीमेप चेतक प्रमुख हैं जो लगभग सभी प्रकार की वातावरणीय परिस्थतियों में सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है। इन प्रजातियों की उपलब्धता केन्द्रीय औषधीय एवं सगन्ध पौध संस्थान, लखनऊ तथा प्रदेश के कृषि विश्वविद्यालयों से प्राप्त किया जा सकता है।

बुआई का समय व बीज की मात्रा

बुआई करने से पहले खेत को अच्छी तरह से 2 बार कल्टीवेटर द्वारा गहरी जुताई कर पाटा लगा दें। जुताई, जब वर्षा तीन चौथाई हो जाय तथा जमीन पानी सोख कर तृप्त हो जाय, सितम्बर के अन्तिम सप्ताह मे करनी चाहिए। इसकी बुआई के लिए 6–8 किग्रां. बीज की प्रति हेक्टेयर की दर से आवश्यकता होती है। यदि खेत की मिट्टी सूखी हो तो बुवाई से पूर्व पलेवा लगा कर नमी युक्त बनाना चाहिए। खेत में मिट्टी उचित नमी के साथ–साथ भुर–भुर बनी हो तो बीज के अंकुरण के लिए अच्छा रहता है।

बीजोपचार

बीज को बोने से पूर्व कार्बेन्डाजिम, थीरम या मेन्काजेब से क्रमशः 2 ग्राम व 3 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित कर लेना चाहिए। जिससे बीज से फैलने वाले फफूंदी जनित रोगों की रोकथाम हो जाती है।

बुआई की विधियां

इस फसल की बुआई मुख्यतया दो प्रकार से की जाती है।

1.कतार विधिः इस विधि से बुवाई करने के लिए कूड़ों में तैयार किये गये खेत में 30–30 सेमी. की दूरी पर कतारों में 2 से 3 सेमी. गहराई पर बीजों की बुवाई कर देते है। बुवाई के तुरन्त बाद पाटा चला देते हैं ताकि कूड़ों में नमी बनी रहे और बीजों का उचित जमाव हो।

2.छिड़काव विधि – इस विधि द्वारा बुवाई करना सर्वोत्तम रहता है। भली–भांति तैयार किए गए खेत में कल्टीवेटर द्वारा हल्की जुताई के उपरान्त बीज में आधा रेत मिला कर बीज को खेत में छिटक कर बिखेर दें। इसके बाद हल्का पाटा चला देना चाहिए। बीजों का अंकुरण 8–10 दिन में हो जाता है। इस विधि से बुवाई करने पर एक वर्ग मीटर में 70 से 80 पौध ही रखें। इस प्रकार एक हेक्टेयर में 7 से 8 लाख पौधों की संख्या रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

औषधीय पौध जिनकी जड़ों का व्यावसायिक प्रयोग किया जाता है, में अकार्बनिक उर्वरकों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। परीक्षणों द्वारा सिद्ध हो चुका है। कि नत्रजन व फास्फोरस के प्रयोग से फसलों की जड़ों के उत्पादन में कोई खास वृद्धि नहीं होती है। अतः किसी रासायनिक उर्वरक के प्रयोग की सिफारिश नहीं की जाती है, परन्तु खेत की तैयारी करते समय सड़ी गोबर की खाद या जैविक खादों की प्रयोग 5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से अवश्य करें।

सिंचाई

अश्वगंधा वर्षा ऋतु की फसल होने के कारण इसमें सिंचाई की आवश्यकता नहीं के बराबर होती है। नमी की बहुत कमी की दशा में सिचाई करना अनिवार्य हो जाता है, परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि खेत में पानी किसी भी दशा में भरा न रहे क्योंकि इससे फसल की जड़ों की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है।

इसकी खेती सिंचित व असिंचित दोनों दशाओं में की जाती है। परन्तु सिंचित अवस्था में खेती करन पर एक सिंचाई बुवाई के 45 से 50 दिन बाद ही करनी चाहिए। असिंचित अवस्था में जड़ों की बढ़वार अधिक होती है क्योंकि जड़ें पानी की तलाश में सीधी बढ़ती है और शाखा रहित है।

निराई–गुड़ाई

बुआई से 40 से 50 दिन बाद एक बार निराई–गुड़ाई अवश्य कर दें। इसी समय कतार से कतार की दूरी 30 सेमी. तथा पौध की दूरी 5 सेमी. कर देना चाहिए।

फसल की खुदाई

जब पौधों की नीचे की पत्तियां पीली पड़ने लगे तथा बेरी नारंगी रंग में परिवर्तित होने लगे तब यह माना जाता है कि फसल खुदाई योग्य हो गयी है। खेत में कुछ स्थानों से पौधों को उखाड़ कर उनकी जड़ों को तोड़कर देखें यदि जड़ मूली की भांति टूट जाय तथा जड़ों में रेशे न हों तब समझें कि फसल खुदाई हेतु तैयार है। जड़ें रेशेदार हो जाने पर जड़ की गुणवत्ता में कमी आ जाती है। इस अवस्था के आने में साढ़े चार से साढ़े पांच माह का समय लगता है। पौधों को जड़ सहित उखाड़ लिया जाता है, यदि जड़ें गहरी हों तो

जुताई करके निकाल लें। बाद में पौधों को एकत्र कर जड़ों को काट कर पौधों से अलग कर छोटे–छोटे टुकड़ों में करके सुखा लें।

जड़ों का श्रेणीकरण

जड़ों से बारीक जड़ों रेशों को मुक्त कर मोटाई एवं लम्बाई के आधार पर श्रेणीकरण करते हैं:

ग्रेड एः इसमें जड़ों की लम्बाई 5–7 सेमी. तथा व्यास 1 से 1.5 सेमी. जो कि तने के ठीक नीचे की होती है। जड़ अन्दर से ठोस व सफेद होती है।

ग्रेड बीः इसमें सफेद मांसल जड़ें जिसकी औसतन लम्बाई 5 सेमी. व्यास 1 सेमी. का होता है जो कि जड़ का मध्य भाग होता है तथा यह जड़े कड़क व ठोस होती है।

ग्रेड सीः सबसे नीचे की जड़ जिसकी औसतन लम्बाई 3 से 4 सेमी. तथा व्यास 1 सेमी. से कम होता है इसमें पतली शाखित जड़ें आती है जो मांसल भी नहीं होती है। पतली शाखाओं युक्त जड़ें मोटी या पतली जो लम्बाई में टेढ़ी मेढ़ी काष्ठीय जड़ें होती हैं यह सब निम्न श्रेणी में आती हैं।

पैदावार

उन्नतशील बीजों तथा बताई गई वैज्ञानिक विधि से खेती करने पर लगभग 7–8 कुन्तल प्रति हेक्टेयर सूखी जड़ें प्राप्त की जा सकती है। वह जड़ें जिनकी लम्बाई 8 से 10 सेमी. हो तथा जिनका व्यास 10 से 15 मिमी. हो व्यापारिक दृष्टिकोण से अच्छी मानी जाती हैं तथा उसकी कीमत अच्छी प्राप्त होती है। बीज प्राप्त करने के लिए फसल के 5 प्रतिशत भाग की खुदाई नहीं करनी चाहिए, जब पौधों की अधिकतर बेरी नारंगी रंग की हो जाय तब काटकर सुखाने के पश्चात बीज निकाल लेते हैं।

आय–व्यय

अश्वगंधा की एक हेक्टेयर की खेती के लिए की तैयारी, बुवाई, निराई–गुड़ाई, सिंचाई, जड़ों की खुदाई एवं संग्रहित करने में लगभग रुपये 23000 से 27000 तक व्यय होता है। जड़ों का बाजार भाव 125 से 175 रुपये प्रति किग्रा. है। शुद्ध लाभ 65,000 से 90,000 रुपये प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त हो जाता है।

(पृष्ठ 11 का शेष)

मैंकोजेब 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। 10 से 12 दिन के बाद एक छिड़काव पुनः करें। जैव रसायन स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स का पर्ण छिड़काव (0.2 प्रतिशत) भी झुलसा के संक्रमण को रोकता है। रोग प्रतिरोध किस्मों जैसे जी.पी.यू. 45, चिलिका, शुग्रा, भैरवी, वी.एल. 149 का चुनाव करें।

1.2 भूरा धब्बा रोग– इस फफूंदजनित रोग का संक्रमण पौध की सभी अवस्थाओं में हो सकता है। प्रारम्भ में पत्तियों पर छोटे–छोटे हल्के भूरे एवं अंडाकार धब्बे बनते हैं। बाद में इनका रंग गहरा भूरा हो जाता है। अनुकूल अवस्था में ये धब्बे आपस में मिलकर पत्तियों को समय से पूर्व सूखा देते हैं। बालियों एवं दानों पर संक्रमण होने पर दानों का उचित विकास नहीं हो पाता, दाने सिकुड़ जाते हैं, जिससे उपज में कमी आती है।

रोकथाम– बुवाई पूर्व बीजों को फफूँदनाशक रसायन मैंकोजेब, कार्बेन्डाजिम या कार्बोक्सिन या इनके मिश्रण से 2 ग्राम प्रति किग्रा बीज दर से उपचारित करें। खड़ी फसल पर लक्षण दिखायी पड़ने पर कार्बेन्डाजिम या मैंकोजेब 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। 10 से 12 दिन के बाद एक छिड़काव पुनः करें। जैव रसायन स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स का पर्ण छिड़काव (0.2 प्रतिशत) भी झुलसन के संक्रमण को रोकता है। रोगरोधी किस्मों जैसे भैरवी का बुवाई हेतु चयन करें।

2. कीट–तना छेदक एवं बालियों की सूडी रागी की फसल के प्रमुख कीट है।

2.1 तना बेधक – वयस्क कीट एक पतंगा होता है जबकि लार्वा तने को भेदकर अन्दर प्रवेश कर जाता है एवं फसल को नुकसान पहुँचाता है। कीट के प्रकोप से ''डेड हर्ट'' लक्षण पौधे पर दिखायी पड़ते हैं।

रोकथाम– कीटनाशक रसायन डाइमेथोएट 1 से 1.5 मि.ली प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें। कीट प्रतिरोधक किस्म चिलिका को बुवाई हेतु चयन करें।

2.2 बालियों की सूड़ी– इस कीट का प्रकोप बालियों में दाने बनने के समय होता है। भूरे रंग की रोयेदार इल्लिया रागी की बंधी बालियों को नुकसान पहुंचाती है जिसके फलस्वरूप दाने कम व छोटे बनते है।

रोकथाम– क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत डी.पी. या थायोडान डस्ट (4 प्रतिशत) का प्रयोग 24 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से करें।

नेट हाउस में जरबेरा की खेती : कम लागत अधिक मुनाफ़ा

सुनील कुमार', संकेत कुमार मौर्य'' एवं नवीन कुमार यादव'''

जरबेरा एक बहुवर्षीय, तना रहित पौधा है, जिसकी उत्पत्ति दक्षिण अफ्रीका में हुई है। जरबेरा एक प्रकार का सजावटी फूल है, जो पूरी दुनिया में उगाया जाता है। इसे 'अफ्रीकन डेजी' या 'ट्रांसवाल डेजी' के नाम से भी जाना जाता है। जरबेरा की खेती विश्व भर में नीदरलैण्ड, इटली, पोलैण्ड, इजराइल और कोलम्बिया में की जा रही हैं। भारत में जरबेरा कट फ्लावर महाराष्ट्र, अरुणाचल प्रदेश, पंजाब, उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा, कर्नाटक और गुजरात आदि उगाने वाले मुख्य क्षेत्र है। जरबेरा के फूल सामान्यतः लाल, पीला, गुलाबी, सफ़ेद, और नारंगी रंग के होते हैं, तथा इन रंगों का मिश्रण भी होता है। इसके पत्ते हरे रंग के होते हैं और वे फूल से नीचे की ओर बढ़ते हैं। बढ़ते शहरीकरण के कारण डंडीदार फूलों की माँग दिनों–दिन बढ़ रही है। जिसमें जरबेरा की अहम् भूमिका है। किसान भाई इस फूल को उगाकर अच्छा मुनाफ़ा कमा सकते हैं, जिसकी कीमत बाज़ार में लगभग 10–30 रु० प्रति डंडी रहती है।

आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय में जरबेरा की खेती पर शोध कार्य किया जा रहा है, जिसकी उन्नतशील खेती के प्रशिक्षण के लिए किसान भाई विश्वविद्यालय के पुष्प एवं भूद्रश्य विज्ञान विभाग में संपर्क कर सकते हैं।

उपयोग

जरबेरा बहुत ही आकर्षक पुष्प है जिसका उपयोग गुल्दस्ता बनाने में, मेज पर सजाने में, गमलों में लगाने में, तथा बगिचे में मिश्रित बॉर्डर बनाने किया जाता है।

अनुकूल जलवायु

जरबेरा उष्ण और समशीतोष्ण जलवायु में खुली जगहों पर लगाया जाता है, परन्तु शीतोष्ण जलवायु में हरित गृह (ग्रीन हाउस या पॉली हाउस) में लगाया जाता है। यह पौधा ठंडे मौसम में धूप पसंद करता है तथा गर्मी के मौसम में हल्की छाया की जरूरत होती है, जिसके लिए 50 प्रतिशत पारदर्शिता वाले शेड नेट का उपयोग गर्मी के दिनों में करना चाहिए। सफ़ल खेती के लिए उपयुक्त तापमान 22–25 डिग्री सेन्टीग्रेड दिन में तथा 12–16 डिग्री सेन्टीग्रेड रात में होना चाहिए।

अन्य किस्में

लाल रंग की किस्में : हिम अपूर्व, अर्का रेड, रूबी रेड, संग्रिया

पीले रंग की किस्में : हिम कीर्ति, हिम सौम्या, डोनी, सुपरमोआ, तलासा, अर्का क्रिशिका

गुलाबी रंग की किस्में : अर्का पिंक, हिम गौरव, पिंक एलेजेंस, मरमारा

नारंगी रंग की किस्में : करेरा, मारासोल, गोलियथ

क्रीम रंग की : फर्डिया, दलमा, स्नोफ्लेक, विंटर क्वीन

भूमि का चयन

जरबेरा फूल को पॉलीहाउस में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है, इसकी खेती के लिए अच्छी जलनिकासी वाली हल्की क्षारीय और उपजाऊ मिट्टी, भरपूर कार्बनिक पदार्थ युक्त जिसका पीएच 5.5–7.0 हो उपयुक्त मानी जाती है।

भूमि उपचार

फुमीगेशन विधि द्वारा बैड तैयार करने के साथ मिथाइल बरोमाइड 30 ग्राम प्रति वर्ग मीटर या फोरमेलिन 100 मि.ली. को 5 लीटर प्रति वर्ग मीटर पानी में मिलाकर मिट्टी से पैदा होने वाली बीमारीयां जैसे कि पाईथीयम, फाइटोफ्थोरा, फ्युज़ेरियम से बचाव किया जा सकता है।

खेत की तैयारी

जरबेरा की खेती के लिए, खेत को अच्छी तरह से तैयार करें। खेत को भुरभुरा बनाने के लिए, रोपण से पहले 2–3 बार जोताई करें। इसके बाद एक मीटर चौड़ी और 45 सेंटीमीटर उठी हुई बेड तैयार करना चाहिए। अब दो भाग में रेत, एक भाग में नारियल या धान का भूसा और एक भाग में गोबर खाद या वर्मीकम्पोस्ट लेकर मिश्रण बना लें और उसे बेड पर डालें।

रोपाई का समय

जनवरी–मार्च और जून–जुलाई माह के मध्य का

'सहायक प्राध्यापक, पुष्प एवं भूद्रश्य विज्ञान विभाग, ''छात्र, पुष्प एवं भूद्रश्य विज्ञान विभाग, ''' छात्र, पुष्प एवं भूद्रश्य विज्ञान विभाग

समय उपयुक्त होता है।

दूरी

बुवाई के लिए कतार से कतार की दुरी 40 से.मी. और पौधे से पौधे की दुरी 30 से.मी. होनी चाहिए तथा हर एक मेड पर पौधों को दो अथवा तीन कतारों में रोपित करना चाहिए।

प्रवर्धन

जरबेरा का प्रवर्धन सूक्ष्म प्रसारणः उत्तक संवर्धन द्वारा रोग मुक्त पौधे तैयार किए जाते हैं। पौधे के अग्र भाग, कलियों, फूलों के उत्तक से उत्तक संवर्धन द्वारा प्रयोगशाला में नये पौधे तैयार किये जाते हैं। उत्तक संवर्धन द्वारा तैयार पौधों में रोग लगाने की संभावना बहुत ही कम होती है जिससे रोगों के नियंत्रण में लगाने वाले खर्चो से बचा जा सकता है

खाद एवं रासायनिक उर्वरक

खेत की तैयारी के समय, वर्मी कम्पोस्ट या अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद 20 टन, फास्फोरस 40 किलो, पोटाश 40 किलो प्रति एकड़ मिट्टी में मिलाएं। लोहे की कमी वाली ज़मीन में, फेरस सल्फेट 10 ग्राम प्रति वर्ग मीटर डालें। बुवाई के 4–5 हफ्ते बाद, नाइट्रोजन 40 किलो प्रति एकड़ 30 दिनों के अंतराल पर डालें।

कर्षण क्रियाएं

खरपतवार नियंत्रण

जरबेरा के पौधे ज्यादा लंबे नहीं होते इसलिए खरपतवार नियंत्रण करना बहुत जरूरी है, नहीं तो पौधों में कई तरह के वायरस और बीमारियों का असर देखने को मिल सकता है। जिसका असर फसल की पैदावार पर पड़ता है। खरपतवार नियंत्रण के लिए प्राकृतिक तरीका अपनाना चाहिए, इसके लिए पौधों की दो से तीन गुड़ाई करनी होती है। जिसमे पहली गुड़ाई को तक़रीबन 20 से 25 दिन बाद तथा बाकी की गुड़ाई को 15 से 20 दिन में करे तथा खुर्पी की मदद से खर–पतवारों को निकल देना चाहिए।

बारिश से बचाव

जरबेरा का पौधा बारिश के प्रति बहुत ही संवेदनशील होता है, अतः बारिश शुरू होने से पहले हरित गृह (नेट हाउस) को पालीथीन से ढक देना चाहिए जिससे बारिश की बुँदे सिधे पौधों पर ना पड़े।

सिंचाई

जरबेरा की खेती में पौधों की बढ़वार के लिए सिंचाई का विशेष महत्व है। मिट्टी की पौध रोपण से पहले हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए तथा पौध रोपण के उपरान्त भी सिंचाई करनी चाहिए। सर्दियों में 10–12 दिनों के अंतराल पर तथा गर्मियों में 6–7 दिनों के अंतराल पर हल्की सिंचाई करते रहनी चाहिए। हरित घर में लगे पौधे की सिंचाई टपकन विधि (ड्रीप सिंचाई पद्धति) से आवश्यकता अनुसार करते रहनी चाहिए।

फसल की कटाई

जरबेरा पौधा लगाने के तीन महीना बाद फूल खिलना शुरू हो जाता है। फूलों को सुबह या शाम के समय काटना चाहिए। फसल की कटाई के लिए किसी भीं उपकरण की आवश्यकता नही होती है साधारणतः फूल की डंडी को ऊपरी सिरे से अंगूठा तथा तर्जनी अंगुली की मदद से पकड़ते है, और नीचे की तरफ झुकाते है, जिससे फूल की डंडी टूटकर पौधे से अलग हो जाती है। इस उपरोक्त क्रिया के दौरान विशेष ध्यान देना चाहिए ताकि पौधे की जड़ें हिलकर ख़राब न हों अन्यथा की स्थिति में पौधे सूख जायेंगे। फूल की डंडियों को कटाई के तुरंत पश्चात् साफ ताजे पानी से भरे बाल्टी में डूबा कर रखना चाहिए अन्यथा पुष्प की डंडी उपरी सिरे से झुक जाती है जिससे पुष्प की गुड्वत्ता पर प्रभाव पड़ता है और बाज़ार में कीमत कम मिलती है।

श्रेणीकरण

कटाई के बाद, फूलों को डंडियों की लम्बाई के हिसाब से अलग–अलग श्रेणी में रखा जाता है, फिर इन फूलो को गत्तों के बक्सों में पैक करके विपणन हेतू बाज़ार में भेज दिया जाता है।

उत्पादन

हरित घर में प्रति वर्ग मीटर में प्रति वर्ष 200–250 फूल का उत्पादन होता है। खुली जगहों पर 120–150 फूल/वर्ग मीटर/वर्ष खिलते हैं।

रोग व कीट नियंत्रण

माहू : माहू के लार्वा झुंड में पौधे के कमजोर हिस्सों पर हमला करते हैं। ये कीड़े दिखने में काले, पीले और हरे रंग के हो सकते हैं। इन कीड़ों को नियंत्रित करने के लिए पौधों पर पर्याप्त मात्रा में इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 100 मिली, ऐसीटाम्प्रिड 100 ग्राम बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

(शेष पृष्ठ 18 पर)

मैंगोस्टीन की खेती के लिए व्यापक मार्गदर्शिका: रोपण और कटाई

अभिषेक सोनकर', बृजेश पटेल' एवं संतोष कुमार वर्मा''

मैंगोस्टाना, जिसे मैंगोस्टीन भी कहा जाता है। मैंगोस्टीन एक उष्णकटिबंधीय पौधा है, जिसे वैज्ञानिक रूप से गार्सिनिया मैंगोस्टाना के नाम से जाना जाता है, और यह क्लूसियासी परिवार से संबंधित हैं, जो दक्षिणपूर्व एशिया का मूल निवासी है। इसका फल मीठा और तीखा, रसदार, कुछ हद तक रेशेदार, पकने पर खाने योग्य, गहरे लाल–बैंगनी रंग का छिलका वाला होता है। जिससे इसे "उष्णकटिबंधीय फलों की रानी" कहा जाता है। इसकी रसदार, नाजुक बनावट और थोड़े कसैले स्वाद के लिए जाना जाता है और आमतौर पर इसे ताजा, डिब्बाबंद या सूखाकर खाया जाता है। फलों में कैलोरी कम होती है, खनिज और इसमें बहुत सारे आवश्यक पोषक तत्व भी होते हैं, लेकिन कोई संतृप्त वसा या कोलेस्ट्रॉल नहीं होता है। मैंगोस्टाना में विटामिन सी से भरपूर होने के कारण, यह सुरक्षात्मक एंटीऑक्सीडेंट गुण प्रदान करता है, जो सेहत के लाभ के लिए जाने जाते हैं। यह आश्चर्यजनक है कि इसका उपयोग वैश्विक स्तर पर लगभग सैकड़ों वर्षों से पारंपरिक चिकित्सा के रूप में किया जाता रहा है।

जलवायु:

मैंगोस्टीन एक उष्णकटिबंधीय फल है और गर्म और आर्द्र जलवायु में पनपता है। इसके लिए 25 से 35 डिग्री सेल्सियस (77 से 95 डिग्री फ़ारेनहाइट) के बीच तापमान की आवश्यकता होती है। पौधा ठंड के मौसम के प्रति संवेदनशील है और ठंढ बर्दाश्त नहीं कर सकता। यह यूएसडीए कठोरता क्षेत्र 11 और 12 के लिए सबसे उपयुक्त है। मैंगोस्टीन के पेड़ों को इष्टतम विकास के लिए भरपूर धूप की आवश्यकता होती है। प्रतिदिन कम से कम 6–8 घंटे सीधी धूप प्रदान करें।

मिट्टी:

मैंगोस्टीन को अच्छी जल निकासी वाली, समृद्ध और दोमट मिट्टी पसंद है। 5.5 और 7.5 के बीच थोड़ा अम्लीय से तटस्थ पीएच स्तर आदर्श है। मिट्टी में अच्छे कार्बनिक पदार्थ की मात्रा सुनिश्चित करें। कम्पोस्ट या अच्छी तरह सड़ी हुई खाद डालने से मिट्टी की उर्वरता बढ़ जाती है।

प्रसार:

पार्थेनोकार्पी (परागण और निषेचन के बिना) द्वारा फल सेट करता है और बिना निषेचन के बीज के माध्यम से प्रचारित करके अंकुरण योग्य बीज भी सेट करता है और पौधे मातृ पौधे के समान होते हैं। जब अंकुर दूसरी पत्ती अवस्था में पहुंच जाते हैं – प्रत्यारोपित अंकुर की वृद्धि बहुत धीमी होती है, अंकुर 2 साल की परिधि के बाद कभी भी 15 सेमी से अधिक ऊंचाई तक नहीं पहुंच पाते हैं (पर्याप्त रेशेदार पार्श्व जड़ों की कमी के कारण)।

वानस्पतिक प्रसार:

- एयर–लेयरिंग, ग्राफ्टिंग या बडिंग
- पौधों को 10 मीटर x 10 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है।
- छोटे पौधों को चिलचिलाती धूप से सुरक्षा देनी चाहिए।

रोपण:

मैंगोस्टीन को आमतौर पर बीजों से प्रचारित किया जाता है। फल से बीज निकालने के बाद जितनी जल्दी हो सके बीज बोना चाहिए, क्योंकि वे जल्दी ही अपनी व्यवहार्यता खो देते हैं। बीजों को अच्छी तरह से तैयार क्यारी में या सीधे कंटेनरों में रोपें। अच्छे वातायन के लिए पीट, पेर्लाइट और रेत युक्त रोपण मिश्रण का उपयोग करें। बीज लगभग 1 इंच गहराई में रोपें और मिट्टी को लगातार नम रखें।

बागवानी परिपक्वता सूचकांक:

फल का त्वचा का रंग परिपक्वता को आंकने के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला प्रमुख मानदंड है। अपरिपक्व फल जिनकी त्वचा हल्की, हरी–पीली होती है और बिखरे हुए गुलाबी रंग के धब्बे होते हैं, काटे जाने पर पूर्ण स्वाद के साथ नहीं पकते हैं। उच्च

'शोध छात्र, फल विज्ञान विभाग, ''सह – प्राध्यापक, फल विज्ञान विभाग, बागवानी एवं वानिकी महाविद्यालय,
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या–224229 (उ.प्र.)

गुणवत्ता वाले फल के लिए न्यूनतम कटाई का चरण तब होता है जब छिलके पर पूरी सतह पर अलग–अलग अनियमित, गुलाबी–लाल धब्बे होते हैं। फल खाने योग्य, पके हुए चरण में होते हैं जब त्वचा लाल–बैंगनी रंग की हो जाती है, त्वचा में कोई लेटेक्स नहीं रहता है, और मांस के खंड त्वचा से आसानी से अलग हो जाते हैं। यांत्रिक चोट से बचने के लिए सावधानीपूर्वक संचालन आवश्यक है।

कटाई:

मैंगोस्टीन के पेड़ आमतौर पर 5–10 वर्षों में फल देना शुरू कर देते हैं। जब फल पूरी तरह से पक जाए तो कटाई करें, जिसका संकेत बाहरी त्वचा के गहरे बैंगनी रंग में बदल जाने से होता है।फल की कटाई तने से फल को मोड़कर की जाती है।

निष्कर्ष:

समर्पण और कठिनाईयों के बावजूद, मैंगोस्टीन की खेती सतत ध्यान और विशिष्ट उष्णकटिबंधीय परिस्थितियों की आवश्यकता होती है। सही जलवायु, मिट्टी, और देखभाल प्रदान करके, आप मैंगोस्टीन के पेड़ों को स्वादिष्ट फल पैदा करने के लिए प्रोत्साहित कर सकते हैं। पौधों को पूर्ण रूप से समर्थन करने के लिए यथासंभाव तत्परता, योग्यता, और तत्परता का ध्यान रखें। बीना, शीत या असुविधा के सहित विभिन्न दुनिया भर में अनुभव किया जा रहा है, और इसे विस्तृत जानकारी देने के लिए एक समर्थन रहा है। सही बुआई, प्रकृतिक सूर्यप्रकाश, समर्थ पौधों, और रोग प्रबंधन के लिए सावधानी के बिना अनुप्रयोग विलंबित किया जा सकता है।

इस आपूर्ति के रास्ते पर आपको आपके मैंगोस्टीन के पौधों की समृद्धि के लिए सही समर्थन प्रदान करने के लिए इस विस्तृत मार्गदर्शिका में उल्लेख किए गए कुछ कुंजीपरक तत्वों का पालन करना होगा। अवस्थिति के आपूर्ति का मैट्रिक्स बनाने के लिए कदम सावधानी से बढ़ाने वाले या एक अनुभवी बागवान के रूप में, यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि आपके पौधों की विशेष आवश्यकताओं का निगरानी रखें और योगदान को अनुसरण करें। अंत में, उबार करने के लिए सही जलवायु, मिट्टी, और देखभाल प्रदान करके मैंगोस्टीन की खेती करना एक सफल परियाय हो सकता है। चाहे आप एक नए उपजाऊ हों या एक अनुभवी बागवान हों, इस विस्तृत मार्गदर्शिका में बताए गए दिशा–निर्देशों का पालन करने से आपको सफलता की ओर मोड़ना चाहिए।

(पृष्ठ 16 का शेष)

लीफ माइनर: प्रभावित पौधों की पत्तियों पर सफेद और भूरे रंग की नालीदार पारदर्शी धारियाँ दिखाई देती हैं। उसके बाद पौधा पोषक तत्वों को अवशोषित नहीं कर पाता है। पौधों पर ऐसीटाम्प्रिड 1 ग्राम/लीटर का छिड़काव करके इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है।

सफ़ेद मक्खी : इस रोग का लक्षण पौधों की पत्तियों में दिखाई देता है सफेद मक्खी से संक्रमित पौधों की पत्तियाँ मुरझाकर पीली पड़ जाती हैं, जिससे पौधे का विकास रुक जाता है। इस बीमारी से बचाव के लिए इमिडाक्लोप्रिड नामक दवा 1.5 मिलि० प्रति लीटर का घोल बनाकर छिडकाव करना चाहिए।

जड़ सड़न : जड़ सड़न रोग एक कवक जनित रोग है, जो अत्यधिक नमी या खेतों में घुसपैठ के कारण पौधों पर पाया जाता है। इस रोग के कारण पौधों का पूर्ण विकास नहीं हो पाता जिसके बाद पूरा पौधा क्षतिग्रस्त होकर गिर जाता है। इस रोग की रोकथाम के लिए कार्बेन्डाजिम नामक फफूंदनाशक दवा का 2 ग्राम प्रति लीटर का घोल बनाकर मिट्टी में मिला देना चाहिए और उचित जल निकासी व्यवस्था से भी इस रोग से बचा जा सकता है।

शीर्ष गलन : यह जरबेरा का एक बहुत ही खतरनाक रोग है, कभी–कभी इस रोग के प्रभाव से पूरी की पूरी फसल ही बर्बाद हो जाती है, अतः समय रहते ही इस रोग का समाधान अति आवश्यक है। इस रोग में पौधे का शीर्ष भाग फफूंद से प्रभावित होता है, जिससे बचाव के लिए पौध रोपाई के समय शीर्ष भाग को मिट्टी की सतह से लगभग 5 सेमी० ऊपर रखना चाहिए अथवा पौध रोपण से पूर्व कैप्टान नामक फफूंदनाशक 0.2 प्रतिशत का घोल बनाकर मिट्टी में मिला देना चाहिए।

सहजन की खेती : किसानों के लिए एक लाभदायक व्यवसाय

अनिल कुमार', वीरेन्द्र कुमार'' एवं प्रवेश कुमार''

सहजन एक बहु उपयोगी पौधा है, इसका वैज्ञानिक नाम मोरिंगा ओलीफेरा है। इसे सहजना, सुजना, सैंजन और मुनगा आदि नामों से भी जाना जाता है। सहजन को अंग्रेजी में ड्रमस्टिक कहा जाता है। मोरिंगा ओलीफेरा को इसके उत्कृष्ट स्वास्थ्य, पोषण और पर्यावरणीय प्रभावों के कारण 'चमत्कारिक वृक्ष' या 'जीवन का वृक्ष' भी कहा जाता है। दक्षिण भारतीय लोग सहजन के फूल, फल, पत्ती का उपयोग अपने विभिन्न प्रकार के व्यजनों में साल भर करते है भारत ही नहीं बल्कि फिलीपिंस, मैक्सिको, श्रीलंका, मलेशिया आदि देशों में सहजन विशेष रूप से उपयोग में लाया जाता है।

सहजन एक कमजोर तना और छोटी–छोटी पत्तियों वाला लगभग 8–10 मीटर ऊंचा पेड़ होता है इस पेड़ के सभी भाग फल, फूल, पत्तियों, बीजों में अनेक पोषक तत्व होते हैं। इसकी जितनी माँग सब्जी के रूप में हैं उतनी ही औषधीय इस्तेमाल के लिए भी है। इसीलिए सहजन की खेती को नकदी और व्यावसायिक लाभ देने वाली फसल माना जाता है। सहजन की खेती में अनाज, सब्जी और बागवानी वाली सभी खूबियाँ है क्योंकि ये साल में कम से कम दो बार उपज देती है। इसका पेड़ पाँच–सात साल तक पैदावार देता है। सहजन की खेती में लागत के मुकाबले काफी अच्छा मुनाफा मिलता है। इसे सिंचाई और रख–रखाव की जरूरत भी कम ही होती है। इसीलिए देश भर में किसानों की दिलचस्पी सहजन की खेती में तेजी से बढ़ रही है।

सहजन में पाए जाने वाले पोषक तत्व

सहजन में 300 से अधिक रोगों की रोकथाम के गुण है। इसमें 90 तरह के मल्टीविटामिन्स, 45 तरह के एंटी–आक्सीडेंट गुण, 35 तरह के दर्द निवारक गुण और 17 तरह के एमिनो एसिड पाए जाते है। इसकी पत्तियों, फली और बीजों में मौजूद विभिन्न प्रकार के आवश्यक फाइटोकेमिकल्स की मौजूदगी के कारण पोषण से भरपूर है। सहजन संतरे से 7–10 गुना अधिक विटामिन सी, गाजर से 10 गुना अधिक विटामिन ए, दूध से 17 गुना अधिक कैल्शियम, दही से 9 गुना अधिक प्रोटीन, केले से 15 गुना अधिक पोटेशियम और पालक से 25 गुना अधिक आयरन प्रदान करता है (रॉकवुड एट अल, 2013)। लगभग छह चम्मच पत्तों का पाउडर एक महिला की दैनिक आयरन और कैल्शियम आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है।

सहजन के उपयोग

सहजन के लगभग सभी भाग (पत्ती, फूल, फल, बीज, छाल, जड और डाली) से प्राप्त तेल आदि खाये जाते हैं। इसकी पत्तियों और फली की सब्जी बनती है। इसके बीजों से तेल निकाला जाता है जिसका उपयोग औषधियों में किया जाता है। अनेक देशों में इसकी छाल, रस, पत्तियों, बीजों, तेल, और फूलों से पारंपरिक दवाएं बनाई जाती है। कई जगहों पर इसके फूलों को भी पकाकर खाया जाता है और इनका स्वाद मशरूम जैसा बताया जाता है।

पशुओं के उपयोगी चारे के रूप में इसकी पत्तियों के प्रयोग से पशुओं के दूध में डेढ़ गुना और वजन में एक तिहाई से अधिक की वृद्धि पायी गई है। कुपोषण, एनीमिया (खून की कमी) में सहजन फायेदमंद होता है। सहजन का उपयोग जल को स्वच्छ करने के लिए भी किया जाता है।

जलवायु

इसकी खेती के लिए सामान्यतया 25–30 डिग्री सेंटीग्रेट औसत तापमान उत्तम माना जाता है। इस तापमान पर सहजन का पेड़ हरा–भरा व काफी अच्छा विकास करता है। यह ठंड को भी सहता है परन्तु पाला से पेड़ को नुकसान होता है। कम या ज्यादा वर्षा से कोई नुकसान नहीं होता है।

1सहायक प्राध्यापक, 2शोध छात्र, सब्जी विज्ञान विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, अयोध्या (उव प्रव) –224229

सहजन की उन्नत किस्में

सहजन की उन्नत किस्मों में कोयम्बटूर–1, कोयम्बटूर–2, रोहित–1, ज्योति–1, पी. के. एम.–1 और पी. के. एम–2 अच्छी मानी जाती हैं।

सहजन की खेती के लिए भूमि

सहजन की खेती सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है। जैसे बेकार, बंजर, कम उर्वर भूमि और यह सूखी बलुई या चिकनी बलुई मिट्टी में अच्छी तरह बढ़ता है परन्तु व्यवसायिक खेती के लिए साल में दो बार फलने वाला सहजन के प्रभेदों के लिए 6–7 पी. एच मान वाली बलुई दोमट मिट्टी बेहतर होती है।

खाद और उर्वरक

सिंचित क्षेत्रों में 26 किलो गोबर की खाद और उर्वरक की 250 ग्राम अप्रैल में दिया जाता है। उर्वरक की खुराक में फसल की आवश्यकता के अनुसार प्रति वर्ष 500 ग्राम की दर से वृद्धि की जा सकती है बुआई के तीन महीने के बाद 100 ग्राम यूरिया 100 ग्राम सुपर फास्फेट 50 ग्राम पोटाश प्रति गड्ढा की दर से डालना चाहिए। वहीं इसके तीन महीने बाद 100 ग्राम यूरिया प्रति गड्ढा दुबारा डालना चाहिए।

सहजन की पौध तैयार करना

सहजन की एक हेक्टेयर में खेती करने के लिए 500 से 700 ग्राम बीज की मात्रा पर्याप्त होती है। बीज को सीधे तैयार गड्ढो में या फिर पॉलीथीन बैग में तैयार कर गड्ढों में लगाया जा सकता है। पॉलीथीन बैग में पौधे एक महीने में लगाने योग्य तैयार हो जाते है। एक महीने की तैयार पौध को पहले से तैयार किए गए गड्ढ़ों में जून से सितंबर तक रोपण किया जा सकता है पौधा जब लगभग 75 सेंमी. का हो जाए तो पौधे के ऊपरी भाग को तोड़ देना चाहिए इससे बगल से शाखाओं को निकलने में आसानी होती है।

पौधरोपण

सहजन के पौधे का रोपण गड्ढा बनाकर किया जाता है। खेत को अच्छी तरह खरपतवार मुक्त करने के बाद 2.52.5 मीटर की दूरी पर 45×45×45 सेंमी आकार का गड्ढा बनाते हैं। गड्ढे में उपरी मिट्टी के साथ 10 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद मिलाकर गड्ढे को भर देना चाहिए। इससे खेत पौध के रोपण के लिए तैयार हो जाता है।

सिंचाई

यदि गड्ढ़ों में बीज से प्रवर्धन किया गया है तो बीज के अंकुरण और अच्छी तरह से स्थापन तक नमी का बना रहना आवश्यक है। फूल लगने के समय खेत ज्यादा सूखा या ज्यादा गीला रहने पर दोनो ही अवस्था में फूल के झड़ने की समस्या होती है। इसलिए इसके पौधों की आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई ही की जानी चाहिए।

सहजन में रोग और कीट प्रबंधन

भुआ पिल्लू नामक कीटः सहजन में मुख्य रूप से भुआ पिल्लू नामक कीट का प्रकोप होता है। यह कीट पूरे पेड़ की पत्तियों को खा जाता है तथा आसपास में भी फैल जाता है। इसके नियंत्रण के लिए डाइक्लोरोफास 0.5 मिली. एक लीटर पानी में घोलकर पेड़ पर छिड़काव करना चाहिए।

फल मक्खीः इसके अलावा सहजन में फल मक्खी का आक्रमण भी देखा गया है। इससे भी फसल को भारी नुकसान होता है। इसके नियंत्रण के लिए डाइक्लोरोफास 0.5 मिली दवा एक लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

फसल की कटाई और उपज

जरूरत के अनुसार सहजन के फलियों की तुड़ाई विभिन्न अवस्थाओं में की जा सकती है। पौधे लगाने के करीब 160–170 दिनों में फल तैयार हो जाता है। एक बार लगाने के बाद से 4–5 वर्षों तक इससे उत्पादन लिया जा सकता है दो बार फल देने वाले सहजन की किस्मों की तुड़ाई सामान्यतः फरवरी–मार्च और सितम्बर–अक्टूबर में होती है। प्रत्येक पौधे से लगभग 40–50 किलोग्राम सहजन सालभर में प्राप्त हो जाता है। सहजन के फल में रेशा आने से पहले ही तुड़ाई कर लेनी चाहिए। इससे इसकी बाजार में मांग बनी रहती है और इससे लाभ भी ज्यादा मिलता है।

कृत्रिम विधि द्वारा कार्प मछलियों का बीज उत्पादन

प्रमोद कुमार', सियाराम'' एवं एस. के. वर्मा'''

भारत एक विकासशील देश है। यहां मत्स्य पालन एक उघोग का रूप ले चुका है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के साथ मात्स्यिकी का योगदान भी अहम है। बदलते परिदृश्य में इनका विकाश बहुआयामी हुआ है। जो रोजगारोन्मुख एवं आर्थिकोपार्जन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आज जरूरत है कि नई विकसित तकनीक का उपयोग कर मत्स्य व्यवसाय में अधिक से अधिक लाभ कमाया जा सकें।

उत्तर प्रदेश एक बडा अर्न्तस्थलीय राज्य है यंहा उपलब्ध जल संसाधनों में लगभग 1.62 लाख हेक्टेयर क्षेत्र तालाब व पोखरों के रूप में है। इन जल संसाधनों का उपयोंग खानें योग मछली का उत्पादन,मत्स्य बीज उत्पादन एवं रगीन मछलियों का उत्पादन किया जा सकता है। सफल मत्स्य उत्पादन के लिए उचित गुणवत्ता का मत्स्य बीज उपलब्ध होना अनिवार्य है। मत्स्य बीज उत्पादन की तकनीकी विधा वार्णित है।

प्रजनक मछली हेतु तालाब प्रंबधन

प्रजनक मछलियों को रखने के लिए 0.2 –0.5 हेक्टेयर का चौकोर तालाब जिसकी औसत गहराई 1.5 मी0 का होना चाहिए। प्रजनक तालाब में हानिकारक जलीय परभक्षी एवं अवांछनीय जलीय पौधे (खरपतवार) को निकाल देना चाहिए। परभक्षी एवं अवांक्षनीय मछलियों के उन्मूलन हेतु विभिन्न विषों का प्रयोग किया जाता है। इनका मात्रा प्रभाव अवधि अग्रतालिका में अंकित है। इनका प्रयोग प्रातः सूर्योदय के समय करना चाहिए।

प्रजनक मछली का चुनाव व संचयन

गुणवत्ता युक्त मत्स्य बीज के उत्पादन हेतु सर्व प्रथम मत्स्य प्रजाति जैसे भारतीय कार्प मछली (रोहू, कतला तथा नैन/मृगल) व चाइनीज कार्प (सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प, कामन कार्प) जो कि मत्स्य पालको द्वारा मुख्तया पाली जाती है। मत्स्य पालक/बीज उत्पादक वैसी मछली का चयन करें जिसका बजार मूल्य ज्यादा हो। मछली की प्रजाति का चयन करने के बाद गुणवत्ता युक्त प्रजनक का चयन करें। ऐसे प्रजनक जो स्वस्थ हो, जिनका समुचित विकास हुआ हो, किसी परजीवी विषाणु, जीवाणु से ग्रस्त न हो तथा एक वर्ष से ज्यादा के हों, इस प्रकार की मछलियों का चयन हम प्रजनक के रूप में कर सकतें है। तालाबों में 1500 कि0ग्रा0/हे0 की दर से विभिन्न प्रजाति की मछलियों जैसे कतला, रूोहू ,मृगल, ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प का 2:3:2:2:1 क्रमशः के अनुपात में संचयन करना चाहिए।

प्रजनक मछलियों की पहचानः

प्रजनक मछलियों में नर व मादा की पहचान करने हेतु विवरण सारणी–2 में दर्शाया गया है।

प्रजनक आहार प्रबन्धन

प्रजनक मछलियों को समुचित पोषण अति आवश्यक है। इनके वजन (शारीरिक भार) का 2–3 प्रतिशत भोजन प्रतिदिन दो विभिन्न समयों में नियमित पूर्वक दे। भोजन के मुख्य अवयव जैसे प्रोटीन, वसा, व कार्बोहाइड्रेट आदि का प्रजनक एवं उनसे उत्पादित बीजों पर बहुत प्रभाव पडता है। प्रोटीन मछली के भ्रूण के विकास एवं जीरों के अंगो के विकास में मुख्य भूमिका निभाता है। नर प्रजनको के आहार में आर्गीनीन एमिनो अम्ल का होना अति आवश्यक है। क्योकि नर के वीर्य में प्रोटामिन पाया जाता है। जो कि आर्गीनीन की सहायता से बनता है। यह नर प्रजनक के वीर्य को अधिक गुणयुक्त बनाता है। वसा

सारणी न0–1 अवांछनीय मछलियों के उन्मूलन हेतु प्रयोग में आने वाले विष

मत्स्य विष का नाम	मात्रा कि0ग्रा0/हे0/मी0 गहराई	प्रभाव अवधि
जमालगोटे के बीजों का पाउडर	30–50	15–20
महुआ की खली	2500	15–20
इमली के बीज	1750–2000	7–10
ब्लींचिंग पाउडर	300–1000	7–20

वि0 व0 वि0 (मत्स्य)1, सहप्राध्यापक/वि0 व0 वि0 (शस्य विज्ञान)2 एवं वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष 3कृषि विज्ञान केन्द्र ,पचपेड़वा, बलरामपुर

सारणी–2 प्रजनक मछलियों की पहचान

लिंग निर्धारण करने के तरीके	मादा प्रजनक	नर प्रजनक
पख एंव त्वचा	मादा प्रजनक का अगला पख (पैक्टोरलफिन) व सर की त्वचा चिकनी एंव पंख के प्रथम काटे की मोटाई कम होती।	नर प्रजनको के अगले पख का प्रथम काटा मोटा तथा निचला हिस्सा व सर का भाग खुरदुरा होता है।
पेट	मादा प्रजनक का पेट अगले पख से जननेन्द्रिय छिद्र तक उभरा हुआ एंव मुलायम होता है।	नर प्रजनक का पेट कठोर, बीच में दबा हुआ एंव नाली जैसा संरचना दिखाई पडती है।
जननेन्द्रिया (मल छिद्र के पूर्व का भाग)	मादा प्रजनक की जननेन्द्रिय छिद्र लाल, उभरी हुई बाहर की तरफ निकला होता है।	नर प्रजनक का जननेन्द्रिय भाग ललिमा लिये हुये सामान्य होता है।
लैगिक उत्पाद	मादा प्रजनक के उभरे भाग (पेट) को हल्का सा दबाने पर अण्डे जननेन्द्रिय छिद्र से बाहर निकलते है।	नर प्रजनक के पेट वाले भाग को हल्का सा दबाने पर दूधिया रंग जैसा चिपचिपा पदार्थ (मिल्ट) निकलता है। (कभी–कभी नर भाकुर में बिना इजेक्शन दिये मिल्ट नही निकलता है)

(अंसतृप्त) मछली के भ्रूण के दिमाग एवं मेरूरज्जु के विकास मे सहायक हेाता है तथा कार्बोहाईड्रेट उर्जा प्रदान करती है। मत्स्य आहार में प्रोटीन 33 से 35 प्रतिशत वसा 10–15 प्रतिशत होनी चाहिए। मत्स्य आहार जिसको किसान भाई खुद बना सकते है, उनके मुख्य अवयव इस प्रकार है। जिन्हे सारणी–3 में दर्शाया गया है।

प्रजनको का उत्प्रेरित प्रजनन एंव प्रजनन कालः

कार्प मछलियों का प्रजनन काल प्रजातिवार विभिन्न समय में होता है। भारतीय मूल की मत्स्य प्रजातियों में भाकुर का प्रजनन काल मई –जून एंव रोहू व नैन का मई–अगस्त होता है। जबकि विदेशी कार्प मछलियों में सिल्वर कार्प व ग्रास कार्प का प्रजनन काल फरवरी से मई का उपयुक्त होता है।

मत्स्य बीज उत्पादन कार्य के लिए अभी तक पीयूष ग्रन्थि का उपयोग प्रचलित था। इसमे मादा प्रजनक को 3–5 मिली0/किग्रा0 शरीर भार से प्रथम इजेक्शन लगाने के उपरान्त अलग टैंक या हापा में रखते थे फिर 6 घण्टे पश्चात दुबारा दूसरा इजेक्शन 5–6 मिली0/किग्रा0 का लगाते समय नर प्रजनक को भी 2–3 मिली/किग्रा0 शरीरभार से इजेक्शन लगाकर दोनो प्रजनको को प्रजनन हेतु सेर्कुलर टैक में रख दिया जाता था। किन्तु उच्च कोटि के पीयूष ग्रन्थि का अभाव, इनके रख रखाव का महंगा होना इत्यादि के कारण अब कृत्रिम हारमोंस जैसे ओवाप्रिम, ओबाटाइड एंव वोवा–एफ0एच0 का 0.2 –0.3 व 0.3 – 0.5 मिली0/किग्रा0 दर से नर एंव मादा प्रजनक मछली में प्रयोग किया जाता है।

सामान्तया इन कृत्रिम हारमोन्स का सिर्फ एक इन्जेक्शन प्रजनक मछलियों को शाम के समय दिया जाता है, जब मौसम कुछ ठंडा हो।यदि प्रजनक मछलियों के शरीरभार में असमानता है तो कृत्रिम हारमोन्स इजेक्शन देने के उपरान्त नर एंव मादा को 1:2 या 2:1 (जैसी स्थिति हो) के अनुपात से इजेक्शन देने के बाद हापा या सर्कुलर हैचरी में रखा जाता है। जिसमे 6–8 घंटो बाद अंडो का उत्सर्जन हो जाता है।उत्सर्जित निषेचित अंडो को हैचिग पूल में डाल दिया जाता है जहां 6से 8 घण्टों में अंडो से बच्चे प्राप्त

(शेष पृष्ठ 29 पर)

विभिन्न मौसम में सेहत का कैसे रखें ध्यान

कंचन एवं एस.के. तोमर

आयुर्वेद में बताया गया है कि आपकी सेहत और मौसम में गहरा संबंध है। हमारे शरीर पर खान–पान के अलावा मौसम और जलवायु का भी प्रभाव पड़ता है। किसी एक मौसम में कोई एक दोष बढ़ता है तो कोई दूसरा शांत होता है जबकि दूसरे मौसम में कोई अन्य दोष बढ़ता घटता रहता है। इसलिए आयुर्वेद में हर मौसम के हिसाब से रहन–सहन और खान पान के निर्देश दिए गए हैं। इन निर्देशों का पालन करके निरोग रह सकते हैं। अपने देश की भौगोलिक स्थिति के अनुसार साल में तीन मौसम होते हैं : गर्मी, सर्दी और मानसून। ये तीन मौसम छः ऋतुओं में बाँटे गये हैं। ये ऋतुएँ हैं :

- शिशिर (जनवरी से मार्च)
- बसंत (मार्च से मई)
- ग्रीष्म (मई से जुलाई)
- वर्षा (जुलाई से सितंबर)
- शरद (सितंबर से नवंबर)
- हेमन्त (नवम्बर से जनवरी)

इन सारी ऋतुओं को सूर्य की गति के आधार पर निर्धारित किया गया है, जिसे अयन कहा जाता है। अयन के दो प्रकार बताए गए हैं :

- उत्तरायण (उत्तर की ओर गति)
- दक्षिणायन (दक्षिण दिशा की ओर गति)

बसंत (मार्च से मई) ऋतु में खान–पान और जीवनशैली

यह मौसम बहुत ही सुहावना होता है। इस मौसम में पूरी प्रकृति ही सुन्दर दिखती है। इस समय ना तो ज्यादा ठंडी होती है ना ही ज्यादा गर्मी, मौसम एक दम मिला जुला होता है। दिन में गर्मी होने के कारण शरीर में जमा कफ पिघलकर निकलने लगता है। इसलिए इस मौसम में कफ के असंतुलन से होने वाले रोग जैसे कि खाँसी, जुकाम, दमा, गले की खराश, टॉन्सिल्स, पाचन–शक्ति की कमी, जी–मिचलाना आदि बढ़ जाते हैं। इसलिए इस मौसम में खानपान पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

बसंत ऋतु में क्या खाएं

इस मौसम में ताजा हल्का और आसानी से पचने वाला भोजन करना चाहिए। मूँग, चना और जौ की रोटी, पुराना गेहूँ और चावल, जौ,राई, भीगा व अंकुरित चना, मक्खन लगी रोटी, हरी शाक–सब्जी एवं उनका सूप, सरसों का तेल आदि का सेवन करें।

सब्जियों में– करेला, लहसुन, पालक, केले के फूल, जिमीकन्द व कच्ची मूली, नीम की नई कोपलें, सोंठ, पीपल, काली मिर्च, हरड़, बहेड़ा, आँवला, धान की खील, खस का जल, नींबू आदि का सेवन करें।

इस मौसम में मौसमी फलों और शहद का सेवन भी ज़रुर करें। पानी अधिक मात्रा में पिएं।

क्या ना खाएं

बसंत ऋतु में भारी, चिकनाई युक्त, खट्टी (इमली, अमचूर) और मीठी चीजों (जैसे कि गुड़, शक्कर) आदि का सेवन नहीं करना चाहिए। इसके अलावा ठंडी तासीर वाले आहार, उड़द, रबड़ी, मलाई जैसे भारी आहार लेने से बचना चाहिए।

रहन सहन में बदलाव

नियमित रूप से हल्का व्यायाम अथवा योगासन करना चाहिए। सूर्योदय से पहले टहलने से स्वास्थ्य में वृद्धि होती है। तेल मालिश करके गुनगुने पानी से नहाएं। धूप में निकलते समय सिर पर टोपी या छाते का प्रयोग करें।

क्या ना करें

इस मौसम में खुले आसमान के नीचे सोना, ठंड में रहना, धूप में घूमना व दिन में सोना भी हानिकारक माना जाता है।

गर्मियों में गर्म हवाओं और लू थपेड़ों का प्रभाव :

गर्मियों में धूप में गर्म हवाओं के कारण सेहत खराब हो सकती है। गर्म हवा के थपेड़ों से अपनी सेहत का ख्याल रखने के लिए इन टिप्स को फॉलो करना चाहिए।

मौसम का मिजाज अब गर्म होने लगा है। अप्रैल की शुरुआत होने वाली है और अप्रैल मई में झुलसा देने वाली गर्मी की शुरुआत हो जाती है। इन दिनों दोपहर में घर से निकलना मुश्किल हो जाता है। ऐसे में आप गर्म हवा के थपेड़ों के कारण बीमार पड़ सकते हैं। आपको गर्म हवाओं और लू से बचने के लिए इन टिप्स को फॉलो करना चाहिए. इससे आप गर्मी की चपेट में आने से बचे रहेंगे साथ ही बीमारियां भी दूर रहेंगी।

कृषि विज्ञान केन्द्र, गोरखपुर, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, अयोध्या–224229

गर्मी और लू से बचने के उपाय

आंवला

आंवला कई आयुवैदिक गुणों से भरपूर होता है। इसका सेवन करने से शरीर को ठंडा रख सकते हैं। यह शरीर में ठंडक को बनाए रखता है और सेहत का ख्याल रखने में मदद करता है। आंवले का सेवन लू से बचाता है इससे आप बीमारियों को दूर रख सकते हैं। इसमें विटामिन सी होता है यह इम्यूनिटी भी बूस्ट करता है। आप आंवले का जूस, कच्चा, अचार, आंवला पाउडर आदि तरीकों से खा सकते हैं।

लाइट कलर के कपड़े

डार्क रंग के कपड़ों में अधिक गर्मी लगती है। इससे बचने के लिए आपको लाइट रंग के कपड़े पहनने चाहिए. गर्मियों में घर से बाहर निकलते समय ढीले–ढाले और कॉटन के कपड़े पहनें यह सबसे अच्छा है। आपको गर्मी के दिनों में स्काई ब्लू, सफेद और लाइट पिंक रंग के कपड़े पहनने चाहिए. इनमें कम गर्मी लगेगी.

हाइड्रेटेड रहें

गर्मियों के मौसम में धूप में बाहर घूमने से डिहाइड्रेशन हो सकता है। इससे बचने के लिए आपको खूब पानी पीना चाहिए. पानी पीने से शरीर में पानी की कमी नहीं होती है। आपको लगातार धूप में बाहर रहना पड़ता है तो हाइड्रेट रहना बहुत ही जरूरी है। ऐसा करके आप लू और गर्मी के कारण बीमार होने से बच सकते हैं।

सनस्क्रीन का इस्तेमाल

गर्म हवाएं और धूप की हानिकारक किरणों से स्किन को बचाना भी बहुत ही जरूरी होता है। आपको इसके लिए सनस्क्रीन का इस्तेमाल करना चाहिए। सनस्क्रीन लोशन अप्लाई करने से त्वचा को सनबर्न और स्किन टैन जैसी समस्याओं से बचा सकते हैं।

धूप से बचें

गर्म हवाओं के संपर्क में आने से बचना चाहिए. अगर जरूरी न हो तो गर्मियों के दिनों में सुबह 11 से दोपहर 4 बजे तक बाहर नहीं निकलना चाहिए। इस समय धूप बहुत तेज होती है और लू लगने का खतरा रहता है। अगर आपको बाहर निकलना पड़ रहा है तो सनग्लास, फुल स्लीव्स के कपड़े पहनकर निकलें। धूप में चेहरे को भी कवर करके रखें।

गर्मियों के मौसम में खानपान एवं जीवनशैली

इस मौसम में तापमान काफी बढ़ जाता है जिससे सारा वातावरण रूखा और नीरस दिखाई देता है। इन दिनों गर्म हवाओं (लू) से बचकर रहना चाहिए और खानपान पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इन दिनों गर्मी की वजह से पसीना ज्यादा निकलता है और शरीर में पानी की कमी होने लगती है। इस मौसम में उल्टी, दस्त और पेचिश की समस्या ज्यादा होती है। इन सभी समस्याओं से बचने के लिए आयुर्वेद में इस मौसम के लिए आहार और रहन सहन से जुड़े ख़ास निर्देश दिए गए हैं।

गर्मियों में क्या खाएं

- गर्मियों के मौसम में हल्का, चिकना, आसानी से पचने वाला भोजन करना चाहिए। ठंडे तरल पदार्थों का सेवन करना इस मौसम में अधिक लाभकारी होता है। इसके लिए चीनी, घी, दूध व मट्ठे का सेवन करें। छाछ में पिसा जीरा व थोड़ा नमक मिलाकर पीना गर्मियों के मौसम में बहुत लाभकारी होता है। छाछ का सेवन सुबह और दोपहर में ही करें, रात में नहीं।
- सब्जियों में चौलाई, करेला, बथुआ, परवल, पके टमाटर, छिल्के सहित आलू, कच्चे केले की सब्जी, सहजन की फली, प्याज, सफेद पेठा, पुदीना, नींबू आदि का सेवन करें।
- दालों में छिलका रहित मूँग, अरहर और मसूर की दाल का सेवन करें।
- फलों में– तरबूज, मीठा खरबूजा, मीठा आम, सन्तरा और अंगूर, हरी पतली ककड़ी, शहतूत, फालसा, अनार, आँवले के मुरब्बे का सेवन करें।
- सूखे मेवों में किशमिश, मुनक्का, चिरौंजी, अंजीर व भिगोए हुए बादाम का सेवन करें।
- तरल पदार्थों में नींबू की शिकंजी, आम का पना, लस्सी, ठंडाई, चन्दन, खसखस, बेल का शरबत, नारियल पानी आदि का सेवन करें। मिश्री व घी मिला दूध, भैंस का दूध आदि का सेवन भी गर्मियों के मौसम में फायदेमंद होता है।
- अरहर की दाल में घी और जीरे का छौंक लगाकर खाएं। रसायन के रूप में हरड़ का सेवन समान मात्रा में गुड़ मिला कर करना चाहिए। इस मौसम में भोजन कम मात्रा में और खूब चबाकर–चबाकर खाना चाहिए। खाने को फ्रिज में रखकर बाद में खाने से परहेज करें। फ्रिज की बजाय घड़े का पानी पिएं।

क्या ना खाएं

- गर्मियों के मौसम में ज्यादा खट्टे और मसालेदार चीजों का सेवन कम करना चाहिए। भारी, तले हुए, मिर्च मसालेदार और बासी खाना ना खाएं। उड़द की दाल, लहसुन, सरसों, खट्टी दही, शहद, बैंगन, बर्फ आदि का सेवन बिल्कुल ना करें।

• हालांकि शहद को औषधि के अनुपान के रूप में लिया जा सकता है। बाजार में बिकने वाली चाट–चटनी आदि खट्टे पदार्थ, खोये के व्यंजन और उड़द की पिट्ठी से बने पदार्थ भी हानिकारक होते हैं। एक बार में अधिक मात्रा में जल नहीं पीना चाहिए, इससे पाचक–अग्नि कमजोर होती है। कुछ–कुछ समय बाद एक–एक गिलास करके पानी पीना लाभकारी है।

रहन सहन में बदलाव

इस मौसम में गर्मी बहुत ज्यादा होती है इसलिए रहने और सोने की जगह ठंडी होनी चाहिए। रहने और सोने वाली जगहों को पंखे, कूलर, एसी आदि के प्रयोग से ठंडा करके रखें। घर से बाहर निकलते समय ठंडा पानी पीकर निकलें। लू से बचने के लिए बाहर निकलते समय साथ में प्याज रखें। रात में अगर आप देर तक जागते हैं तो थोड़ी–थोड़ी देर पर पानी पीते रहें। इससे वात और कफ दोष कुपित नहीं होते और कब्ज भी नहीं होता।

रात का भोजन विशेष रूप से हल्का और सुपाच्य होना चाहिए। यदि हो सके तो इस समय सप्ताह में एक–दो बार खिचड़ी का सेवन करें। रात का भोजन जितना जल्दी हो सके कर लेना चाहिए। इस ऋतु में दिन के समय थोड़ा सोया जा सकता है।

क्या ना करें

एकदम ठंडी जगह से अचानक निकलकर धूप में ना आएं। थोड़ा रुक कर पसीना सूख जाने के बाद और शरीर का तापमान सामान्य होने पर ही जल आदि पिएं। फ्रिज के पानी में सादा पानी मिला कर पियें। शराब का सेवन इस मौसम में ना करें। आयुर्वेद के अनुसार इस मौसम में संयमित रुप से सेक्स करना चाहिए।

वर्षा ऋतु में खानपान और जीवनशैली

इस मौसम में बारिश होने के कारण आस पास के वातावरण में काफी गंदगी फ़ैल जाती है। इस वजह से मच्छर मक्खियाँ आदि काफी बढ़ जाती हैं और संक्रमण होने का खतरा भी बढ़ जाता है। इस मौसम में नमी की वजह से वात दोष असंतुलित हो जाता है और पाचन शक्ति कमजोर हो जाती है। वर्षा की बौछारों से पृथ्वी से निकलने वाली गैस, अम्लता की अधिकता, धूल और धुएँ से युक्त वात का प्रभाव भी पाचन–शक्ति पर पड़ता है। बीच–बीच में बारिश न होने से सूर्य की गर्मी बढ़ जाती है। इससे शरीर में पित्त दोष जमा होने लगता है।

इन सब कारणों से व संक्रमण से मलेरिया, फाइलेरिया बुखार, जुकाम, दस्त, पेचिश, हैजा, आत्रशोथ, गठिया, जोड़ों में सूजन, उच्च रक्तचाप, फुंसियाँ, दाद, खुजली आदि अनेक रोगों की संभावना बढ़ जाती है।

मानसून सीजन में क्या खाएं

• वर्षा–ऋतु में हल्के, सुपाच्य, ताजे, गर्म और पाचक अग्नि को बढ़ाने वाले खाद्य–पदार्थों का सेवन करना चाहिए। ऐसी चीजों का सेवन करें जो वात को शांत करते हों। इसलिए पुराना अनाज जैसे गेहूँ, जौ, शालि और साठी चावल, मक्का (भुट्टा), सरसों, राई, खीरा, खिचड़ी, दही, मट्ठा, मूँग खाएं। दालों में मूंग और अरहर की दाल खाना लाभकारी होता है।

• सब्जियों में लौकी, भिण्डी, तोरई, टमाटर और पुदीना की चटनी खाएं और सब्जियों का सूप पिएं।

• फलों में सेब, केला, अनार, नाशपाती, पके जामुन और पके देशी आम खाएं।

• घी और तेल में बने नमकीन पदार्थ भी उपयोगी रहते हैं।

• आम और दूध का एक साथ सेवन करना इस मौसम में बहुत लाभकारी माना जाता है। यदि एक समय भोजन के स्थान पर आम और दूध का उचित मात्रा में सेवन किया जाए, तो शरीर में ताकत, सुडौलता और पुष्टि आती है।

• दही की लस्सी में लौंग, त्रिकुट (सोंठ, पिप्पली और काली मिर्च), सेंधा नमक, अजवायन, काला नमक आदि डाल कर पीने से पाचन–शक्ति ठीक रहती है।

• लहसुन की चटनी व शहद को जल एवं अन्य पदार्थों (जो गर्म न हों), में मिला कर लेना उपयोगी है।

• इस मौसम में पानी को स्वच्छ रखने पर ज्यादा ध्यान दें क्योंकि संक्रमित या प्रदूषित पानी की वजह से हैजा, फूड पायजनिंग जैसी कई बीमारियां हो सकती हैं। इसलिए पानी को अच्छे से उबालकर फिर ठंडा करके पिएं या फ़िल्टर का प्रयोग करें।

क्या ना खाएं

• इस मौसम में पत्ते वाली सब्जियां, ठण्डे व रूखे पदार्थ, चना, मोंठ, उड़द, जौ, मटर, मसूर, ज्वार, आलू, कटहल, सिंघाड़ा, करेला और पानी में सत्तू घोलकर लेना हानिकारक माना जाता है। वर्षा ऋतु में जब वर्षा बहुत कम होती है, तो पित्त का प्रकोप होने लगता है। इस समय खट्टे, तले हुए, बेसन से बने पदार्थ, तेज–मिर्च मसाले वाले, बासी खाद्य–पदार्थों और पित्त बढ़ाने वाले खाद्यों का सेवन नहीं करना चाहिए।

• भारी भोजन, बार–बार भोजन करना और भूख न

होने पर भी भोजन करने से बचना चाहिए। रात के समय दही और मट्ठा तो बिल्कुल नहीं लेना चहिए।

रहन सहन में बदलाव

शरीर की मालिश और सिकाई करें। साफ़ सुथरे और हल्के कपड़े पहनें। अगर आप बारिश में भीग गए हैं तो तुरंत अपने कपड़ों को बदल लें। ऐसे स्थान पर सोना चाहिए, जहाँ अधिक हवा और नमी न हो। भोजन भूख लगने पर और ठीक समय पर ही करना चाहिए। रात्रि को भोजन जल्दी कर लेना चाहिए। मच्छर आदि से बचने के लिए मच्छरदानी का प्रयोग करना चाहिए। घर के आस–पास के गड्ढों में जमा हुए और सड़ रहे पानी में मच्छर, मक्खियाँ आदि कीड़े बहुत पनपते हैं व रोग फैलाते हैं, अतः उनमें कीटनाशक छिड़क देना चाहिए। सफाई का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है।

क्या ना करें

• गीले कपड़ों और गीले बिस्तर का उपयोग ना करें। ऐसा करने से बीमारियां तुरंत पनप सकती हैं। शरीर के जोड़ों, विशेषकर जांघों के जोड़ और गुप्त अंगों के आस–पास की चमड़ी को पानी या पसीने से गीला होने से बचाये रखना चाहिए।

• इस मौसम में सड़क पर फिसलन बहुत ज्यादा रहती है इसलिए बाइक या कोई और वहां चलते समय सावधानी बरतें।

• शरीर में घमौरियाँ निकलने पर बर्फ का टुकड़ा मल कर लगाना चाहिए अथवा पाउडर का प्रयोग करें।

शरद ऋतु (सितम्बर से नवंबर) में खान पान और जीवनशैली :

यह सर्दियों की शुरुवात वाला मौसम होता है। अब आपके शरीर को वर्षा और उसकी ठंडक को सहने का अभ्यास हो जाता है। मानसून सीजन के बाद इस मौसम में सूर्य अपने पूरे तेज और गर्मी के साथ चमकता है। इस गर्मी की वजह से वर्षा ऋतु में शरीर में जमा हुआ पित्त एकदम असंतुलित हो जाता है। इस वजह से शरीर का रक्त दूषित हो जाता है।

जिसके परिणामस्वरूप बुखार, फोड़े–फुंसियाँ, त्वचा पर चकत्ते, घेंघा, खुजली आदि रोगों की संभावना बढ़ जाती है।

शरद ऋतु में क्या खाएं

• इस मौसम में पित्त को शांत करने के लिए घी और तीखे पदार्थों का सेवन करना चाहिए। इस लिहाज से मीठे, हल्के, सुपाच्य खाद्य एवं पेय पदार्थों का सेवन करना चाहिए।

• शालि चावल, मूँग, गेहूँ, जौ, उबाला हुआ दूध, दही, मक्खन, घी, मलाई, श्रीखंड आदि का सेवन लाभकारी होता है।

• सब्जियों में चौलाई, बथुआ, लौकी, तोरई, फूलगोभी, मूली, पालक, सोया और सेम खाएं।

• फलों में– अनार, आँवला सिंघाड़ा, मुनक्का और कमलगट्टा लाभकारी हैं।

• इस ऋतु में हरड़ के चूर्ण का सेवन, शहद, मिश्री या गुड़ मिलाकर करना चाहिए।

• आँवले को शक्कर के साथ मिलाकर खाएं।

क्या ना खाएं

इस मौसम में सरसों का तेल, मट्ठा, सौंफ, लहसुन, बैंगन, करेला, हींग, काली मिर्च, पीपल, उड़द से बने भारी खाद्य पदार्थ नहीं खाने चाहिए। इसके अलावा कढ़ी जैसे खट्टे पदार्थ, क्षार द्रव्य, दही और नमक वाले खाद्य पदार्थ अधिक मात्रा में नहीं खाने चाहिए।

भूख लगे बिना भोजन नहीं करना चाहिए।

रहन–सहन में बदलाव

प्रदूषित रक्त से होने वाली बीमारियों से बचने के लिए रक्तमोक्षण चिकित्सा करवाएं।

रात्रि के समय चंद्रमा की किरणों में बैठने, घूमने या सोने से स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

क्या ना करें

इस मौसम में पूर्व से आने वाली हवाओं से भी खुद को बचाना चाहिए। इन हवाओं के संपर्क में आने से जोड़ों में दर्द की समस्या होने लगती है।

अब आप किस मौसम में क्या खाना चाहिए और कैसा रहन सहन रखना चाहिए इस बारे में काफी कुछ जान चुके हैं। यहां एक बात ध्यान देने वाली है कि जैसे ही मौसम में बदलाव हो अर्थात किसी ऋतु के आखिरी हफ्ते में ही आपको अगले मौसम के हिसाब से खानपान और रहन सहन में धीरे धीरे बदलाव शुरु कर देने चाहिए।

पिछले मौसम में खाए जाने वाले आहारों कों अचानक छोड़कर नए मौसम के हिसाब से अगर आप खाने पीने लगते हैं तो इससे रोग उत्पन्न हो सकते हैं। इसलिए धीमे धीमे बदलाव लायें जिससे आपका शरीर उस अनुसार अनुकूलित हो जाए।

मौसम में बदलाव के समय पहले वाले मौसम के मौजूद दोषों में नए मौसम आने पर उनकी मूल प्रकृति बदलने लगती है। इसलिए इस समय अपने खानपान, जीवनशैली और योगाभ्यास पर विशेष ध्यान दें। ऐसा करके आप ऋतुपरिवर्तन में दोषों के प्रकोप से होने वाले रोगों से मुक्त रहेंगे।

वृद्धावस्था में संतुलित पोषण एक सर्वांगीण स्वास्थ्य कुंजी

ज़ीनत अमान एवं साधना सिंह

वृद्धावस्था, मनुष्य की परिपक्वता का प्रतीक है। वृद्धावस्था वह अवस्था है जब हम शारीरिक और मानसिक रूप से बुजुर्ग हो जाते हैं। आम तौर पर 60 या 65 वर्ष की आयु के बाद की अवस्था को वृद्धावस्था कहा जाता है। जैसे–जैसे हम बुढ़ापे की ओर बढ़ने लगते है, हमारे शरीर में बहुत सारे परिवर्तन होने लगते है, जैसे– हमारे शरीर की कोशिकाएं कमज़ोर होने लगती है तथा काम करना बंद कर देती है, जिससे कमजोरी, चलने–फिरने में दिक्कत, स्मरण शक्ति में कमी जैसी समस्याएं सामने आती हैं। मानसिक स्वास्थ्य भी प्रभावित हो सकता है और अवसाद, अल्जाइमर जैसे भूलने की बीमारी जैसी समस्याएं पैदा हो सकती हैं।

वृद्धावस्था में, शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य का महत्व

वृद्धावस्था में, शारीरिक व मानसिक क्षमताएं कम होने के कारण, विभिन्न बीमारियाँ उन्हें घेरने लगती हैं, अन्य रोगों का सामना करना पड़ता है तथा योग्य आहार का अभाव और अव्यायाम हो सकता है। इसलिए, वृद्धावस्था में संतुलित आहार, नियमित व्यायाम, और नियमित चेकअप की आवश्यकता होती है। व्यक्ति को अपने शारीरिक स्वास्थ्य का ध्यान रखना चाहिए और आवश्यकता पड़ने पर डॉक्टर से सलाह लेनी चाहिए। हालांकि, आज के युग में वृद्धावस्था को लेकर जागरूकता बढ़ी है, और लोग इस अवस्था में भी सक्रिय और स्वस्थ रहने के प्रयास करते हैं। इसलिए, वृद्धावस्था में, लघु, संतुलित और पोषक आहार और देखभाल का विशेष ध्यान रखना बहुत ज़रूरी हो जाता है।

वृद्धावस्था में आर०डी०ए० द्वारा निर्धारित मानदंड

भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद के अनुसार, वृद्धों को कम ऊर्जा की जरूरत होती है क्योंकि उनका आधारीय चयापचय दर यानी बेसल मेटाबॉलिक रेट कम हो जाता है, आधारीय चयापचय दर वह दर है जिस पर शरीर आराम की स्थिति में ऊर्जा का उपयोग करता है। जिससे वृद्धों में 10 प्रतिशत प्रति दशक खाना खाने की क्षमता कम हो जाती है। परिषद् ने वर्ष 2020 में वृद्धों की अनुशंषित दैनिक आहार सीमा (आरडीए) की मात्रा शारीरिक गतिविधि, आयु समूह और लिंग के अधार पर विभिन्न पोषक तत्वों की मात्रा निर्धारित की है जो निम्नलिखित है–

अनुशंषित आहार	पुरुष	महिला
कैलोरी	2110	1660
वसा	25	20
प्रोटीन	42.9	36.3
कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	800	800
कैल्शियम (मिलीग्राम)	320	270
मैग्नीशियम (मिलीग्राम)	270	180
आयरन (मिलीग्राम)	11	11
जिंक (मिलीग्राम)	9.5	9.5
विटामिन ए (आईयू)	460 से 600	390
विटामिन डी (आईयू)	400	400

वृद्धावस्था में पौष्टिक आहार एवं स्वास्थ्य प्रबंधन

सही आहार लेना जैसे– प्रोटीन युक्त अंडे, दाल, दही, पनीर और सोयाबीन आधारित खाद्य पदार्थ। प्रतिदिन कोई एक मौसमी फल का सेवन करना चाहिए जैसे सेब, संतरा, अमरुद, जामुन, शरीफा, पपीता आदि। जो की विटामिन सी, विटामिन ए भरपूर मात्र में पाया जाता है चूँकि ये विटामिन्स एंटीऑक्सीडेंट युक्त होते है, जिससे हमारे शारीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है तथा बीमारियों के पनपने वाले फ्री–रेडिकल्स का खात्मा करते है। मौसमी सब्जियों का सेवन करना चाहिए, जो कि खनिज लवणों से भरपूर होतें है, जैसे– कैल्शियम, फॉस्फोरस, मैग्नीशियम, सोडियम, पोटैशियम, लोहा आदि। हरी पत्तेदार तथा रेशा युक्त सब्जियां जैसे बथुआ, पालक का साग, सहजन, भिन्डी, तरोई, करेला आदि खाने से पाचक तंत्र की क्रियाएँ सुचारू रूप से कार्य करती है, कब्ज़, बवासीर जैसे बिमारियों से राहत देती है। दूध, दही, छांछ पीने से कमज़ोर हड्डियों को मजबूती प्रदान करती है।

बुढ़ापे में शरीर में लोहा यानी आयरन का स्तर संतुलित होना अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि यह हीमोग्लोबिन एवं प्रोटीन की मात्रा को पर्याप्त बनाये रखने और ऊतकों

खाद्य एवं पोषण विशेषज्ञ, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

तक ऑक्सीजन पहुचाने का महत्वपूर्ण कार्य करता है, और इसकी कमी से हृदय रोग, कई सारे अंगों की कार्यप्रणाली एवं रोगप्रतिरोधक क्षमता पर बुरा असर पड़ता है। आयरन की कमी से कमजोरी व एनीमिया उनके लक्षण जैसे चक्कर आना, थकान बनी रहना, त्वचा का पीलापन, साँस लेने में दिक्कत व सिर में दर्द, सिर का भारीपन, हाँथ पांव का ठंडा रहना, शरीर में मीठी–मीठी दर्द होना, भूख न लगना, चिडचिडापन आदि समस्याओं की अनुभूति होती है। आयरन के साथ–साथ विटामिन सी, विटामिन बी काम्प्लेक्स लेना अत्तयंत आवश्यक होता है जिससे आयरन का हमारे शरीर में भली–भांति समावेश हो सके।

हृदय रोग के बुजुर्गों को तली भुनी चीज़ों से परहेज़ करना चाहिए तथा अधिक नमक का सेवन करने से बचना चाहिए और खाने में रोज़ सुबह लहसुन की दो कलियाँ खाने से उच्च रक्तचाप से निजात मिलता है। शुगर के मरीजों को, कम सर्करा वाले खाद्य पदार्थ खाने चाहिए, ताकि खून में ग्लूकोस की मात्रा संतुलित रहे, रोज़ सुबह दो चम्मच रात में भिगोई हुई मेथी का इस्तेमाल कर सकते है या महिलाएं इसे आटें में गूँथ कर रोटी बना कर भी इस्तेमाल कर सकती है।

वृद्धों में श्रीअन्न का प्रयोग

खाने में मिल्लेट्स यानी मोटे अनाज जैसे– ज्वार, बाजरा, रागी, साँवाँ, कोदों, कानून, कंगनी जैसे श्रीअन्न का इस्तेमाल कर सकते है। श्रीअन्न हमारे पुराने पद्धति की उपज है, तथा पोषक तत्वों का भण्डार है, जिसमे ग्लायसेमिक इंडेक्स की मात्रा न्यूमतम होती है, तथा मधुमेह की रोकथाम तथा अन्य बीमारियों से बचाव करने में सहायक होते है। यह आयरन, जिंक तथा कैल्शियम जैसे खनिजों का उपयुक्त स्रोत है। श्रीअन्न ग्लूटेन मुक्त होता है और सिलिएक रोग के रोगियों द्वारा इनका सेवन भी किया जा सकता है। अर्थात, मोटे अनाज हर व्यक्ति को किसी भी रूप में लेना चाहिए, चाहे लड्डू बना कर, मठरी, चिप्स, पापड़, लठ्ठा आदि, तथा विभिन्न प्रकार के व्यंजन जैसे इडली, डोसा, उत्तपम, अप्पम, खिचड़ी, खीर या रोटी बना कर भी इस्तेमाल कर सकते है। सामान्यतयः, सभी वृद्धजनों को खाने में तरह–तरह के रंगीन खाद्य पदार्थ शामिल करना चाहिए, जिससे हर तरह का पोषक तत्त्व शरीर में मिलता रहे।

इसके साथ–साथ, समय–समय पर पानी–पीना भी अहम् भूमिका निभाता है। मानव शरीर को सुचारू रूप से चलाने की कुंजी है, कि "दिन में एक गुना खाना खाए, दो गुना पानी पिए और तीन गुना नियमित व्यायाम करना चाहिए"। मन को शांत रखने के लिए ध्यान, प्राणायाम और योगासन का अभ्यास करना चाहिए। व्यायाम करते समय, इस बात का ध्यान अवश्य देना चाहिए, कि कहाँ साँस लेना है, कहाँ साँस छोडना है, कितनी देर तक साँस को रोक कर रखना है, तभी ही हमें और हमारे शारीर को व्यायाम करनें का लाभ मिलेगा, अन्यथा शरीर में दुर्बलता आती है।

वृद्धावस्था में आवश्यक शारीरिक और मानसिक गतिविधियां

वृद्धावस्था में, स्वस्थ रहने और गंभीर बीमारियों से बचाव के लिए शारीरिक गतिविधियां अत्यंत लाभकारी होती हैं, जो व्यक्ति को स्वस्थ और फिट रखने में सहायक होती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में वृद्धावस्था के दौरान स्वस्थ जीवनशैली बनाए रखने के लिए, वृद्ध पुरुष खेतों में हल्के काम तथा पशुपालन की देखभाल करना, वहीँ, वृद्ध महिलाएं घर के रोजमर्रा के छोटे–छोटे कार्य करते रहने से शारीरिक गतिविधि बनी रहती हैं और उन्हें सक्रिय रखते हैं।

परिवार के साथ बैठकर लूडो खेलना, बच्चों के साथ खेल–खेलना, उन्हें कहानियां सुनाना और पहेलियां बुझवाना मानसिक तनाव को कम करता है तथा बुद्धि को तेज रखने में सहायक होता है। गांव के समुदाय केंद्रों में बैठकों, धार्मिक कार्यक्रमों और सामाजिक गतिविधियों में भाग लेना उन्हें आध्यात्मिक और समाज से जुड़े रहने में मदद करता है।

शहरी क्षेत्रों में वृद्ध व्यक्ति योग, व्यायाम के साथ–साथ साइकिलिंग, जॉगिंग, टहलना और बागवानी जैसी गतिविधियां उन्हें सक्रिय और मनोरंजनपूर्ण बनाती हैं। ये गतिविधियां उनके शारीरिक स्वास्थ्य को सुधारती हैं, प्रतिरक्षा प्रणाली यानि इम्यून सिस्टम को मजबूत बनाती हैं और गंभीर बीमारियों से बचाती हैं। साथ ही, मानसिक रूप से सक्रिय रहने वाले कार्य जैसे गणना करना, लूडो खेलना, पहेलियां सुलझाना आदि भी भूलने की बीमारियों जैसे अल्जाइमर से बचाव करते हैं। इसलिए, वृद्धावस्था में नियमित व्यायाम करना और स्वस्थ जीवनशैली अपनाना अत्यंत आवश्यक है।

वृद्धावस्था में सम्मान और देखभालः परिवार और समाज की ज़िम्मेदारी

समाज में वृद्धों का सम्मान और उनकी भूमिका एक अहम मुद्दा है। पहले वृद्धों को परिवार और समाज में महत्वपूर्ण माना जाता था क्योंकि वे अनुभव और ज्ञान के भंडार थे। उनकी राय और सलाह बहुत महत्व होता था। लेकिन धीरे–धीरे ऐसा नहीं रहा और वृद्धों को अक्सर उपेक्षित और अनदेखा किया जाने लगा। हमें समाज में वृद्धों का सम्मान और सम्मान बहाल करना होगा और उन्हें सक्रिय रूप से शामिल करना होगा। रिश्तेदारों और मित्रों के साथ घुलना मिलना होगा। बुजुर्गों का ज्ञान और अनुभव युवाओं के लिए बहुत कारगर हो सकता है, यह हमें समझना होगा।

इस बात पर भी विचार करना जरूरी है, कि वृद्धावस्था में जीवन की गुणवत्ता कैसे बढ़ाई जा सकती है। इसके लिए स्वास्थ्य देखभाल व्यवस्था में सुधार लाना बहुत जरूरी है, वृद्धों के लिए सस्ती और गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध होनी चाहिए। साथ ही उन्हें मानसिक स्वास्थ्य सहायता भी मिलनी चाहिए। वृद्धावस्था में होने वाले शारीरिक और मानसिक परिवर्तनों को समझने और उनका प्रबंधन करने में उन्हें मदद की जरूरत होती है, जैसे– हम छोटे शिशुओं के लिए मालिश तेल खरीदते है, वैसे ही वृद्धों के जोड़ों के दर्द के लिए तेल खरीद सकते है, उनकी सेवा कर सकते है। ऐसे छोटी–छोटी खुशियों से परिवार में खुशनुमा माहोल बना रहता है और सुखी परिवार का आगाज़ होता है।

इसके साथ ही, वृद्धजनों के लिए आर्थिक सुरक्षा और आय के स्रोत बहुत महत्वपूर्ण हैं। उन्हें वृद्धा पेंशन, सामाजिक सुरक्षा लाभ और अन्य सहायता मिलनी चाहिए ताकि वे सम्मान पूर्वक जीवन जी सकें। इस तरह, परिवार व समाज में उनकी देखभाल कर सकते है, ताकि वे अकेलेपन का सामना न करें। बूढ़े–बुजुर्गों को हमारे प्यार और स्नेह की ज़रूरत है। इस तरह, हमारे बुजुर्ग स्वस्थ, सक्रिय, और खुशहाल जीवन जीने के लिए प्रेरित हो सकते हैं।

(पृष्ठ 22 का शेष)

हो जाते है। किन्तु प्रजनन के समय जल की गुणवत्ता हेतु तापमान 27–29° सेन्टीग्रेड, घुलित आक्सीजन 5पी0पी0एम0 से ज्यादा, पी0एच0 6.2 से 7.6 तथा अमोनिया 0.01 पी0पी0एम0 से कम एंव आस –पास का माहौल शांत होना चाहिए

मत्स्य बीज का रख–रखाव

हैचिग पूल से मत्स्य बीजो को 72 घण्टे बाद नर्सरी तालाब में स्थानान्तरित कर दिया जाता है तदोपरान्त चौथे दिन से सरसों की खली एवं चावल का कना (1:1भार के हिसाब से) पानी में भिगो कर बीज के वजन का चार गुना पांच दिनो तक देते है। 6से 12 दिन की अवधि मे भोजन की मात्रा दुगुनी कर देते है। उसके बाद इन मत्स्य बीजो का पालन हेतु विपणन किया जाता है।

मत्स्य बीज विपणन व सावधानियांः

दो तीन सप्ताह के मत्स्य बीज जिनका आकार 2–2.5 सेमी0 हो जाने पर नर्सरी तालाब से प्रातः काल या सूर्यास्त से पूर्व सूती कपडें से बने महीन जाल जिसका मेस आकार 25–30 मिमी0 हो द्वारा पकड कर विक्रय कर सकते है अथवा अगुलिका अवस्था (फिंगरलिंग) तक बढने के लिए पालन तालाब में संचित कर कुल

सारणी –3 मत्स्य आहार हेतु प्रमुख अवयव

क.सं	अवयव	मात्रा प्रतिशत में
1	चावल का कना	25–30
2	मूंगफली की खली	30–33
3	सोयाबीन	15–20
4	मत्स्य चुर्ण	07–10
5	विटामिन व खनिज मिश्रण	01–02
6	वनस्पति तेल	1.5–03
7	मछली का तेल	0.5–1.0

मत्स्य भार का 2–3 प्रतिशत मत्स्य आहार दिया जाता है।

नर्सरी तालाब से मत्स्य बीज विक्रय व स्थानान्तरण करने से एक दिन पूर्व मत्स्य बीजों को अतिरिक्त भोजन बन्द कर देते है अन्यथा फूले पेट होने के कारण इनके मरने की सम्भावना बढ़ जाती है समय–समय पर जाल चलाकर मत्स्य बीज के बढवार की जॉच करना, लाल दवा (पोटैशियम परमैग्नेट) का प्रयोग आदि से तालाब के घुलित आक्सीजन व पैरासाइट से बचाया जाता है।

आइए जानें क्या है उत्तर प्रदेश मुख्यमंत्री खेत सुरक्षा योजना

डा0 अनिल कुमार

पिछले कुछ समय से आवारा पशु एक बड़ी समस्या बनते जा रहे हैं। आम लोगों को घायल करने से लेकर सड़क दुर्घटनाओं के पीछे भी यही जिम्मेदार होते हैं। ऐसे में इन सभी छुट्टा जानवरों से निजात पाने के लिए एक विशेष अभियान चलाकर पूरे प्रदेश में लोगों को राहत देने की कोशिश किए जाने की आवश्यकता है।

खेती के दौरान प्राकृतिक आपदाओं के साथ–साथ कई सारी चुनौतियों का सामना भी किसानों को करना पड़ता है ऐसे में उनकी खडी फसल जब आवारा पशुओं द्वारा चर लिया जाता है तो उन्हे काफी तकलीफ होती है। वहीं जो गाय दूध देना बंद कर देती है उसे पशुपालक खूंटे में नहीं बांधना चाहता है जिस कारण आवारा पशुओं की संख्या में वृद्धि हो रही है। मवेशी खेत चर लेते है जिसका सीधा नुकसान किसान को ही उठाना पड़ रहा है आवारा पशुओं के आतंक से लगभग बडी तादाद में किसानों ने खेती से मुंह मोड़ना शुरू कर दिया है इसलिए यह कहना गलत नहीं होगा की आवारा पशुओं के आतंक का असर कहीं न कहीं अर्थव्यवस्था पर भी पड़ने वाला है।

हालांकि सरकारी योजनाओं के माध्यम से आवारा पशुओं की उचित देखभाल के लिए शहरी और ग्रामीण नागरिक निकायों के अंतर्गत गौवंश के लिए कम से कम 1000 पशुओं की क्षमता वाले आश्रय स्थल स्थापित किए गए हैं इस काम के लिए सरकार ने 100 करोड़ रुपए भी जारी किए हैं। पशु आश्रय स्थलों की स्थापना के साथ सौर ऊर्जा से संचालित तार की बाड़ लगाने पर सरकार द्वारा खर्च किए जाने, की भी योजना है, उनके रखरखाव के लिए धन की व्यवस्था हेतु सरकार ने दो प्रतिशत गौकल्याण उपकर लगाने का भी फ़ैसला किया है।

राज्य सरकार द्वारा गौ–वध निवारण (संशोधन) अध्यादेश 2020 के अंतर्गत गौ–वध पर पूरी तरह प्रतिबंध लगाया हुआ है। उत्तर प्रदेश की जनता ख़ास तौर पर किसान इन दिनों आवारा पशुओं से परेशान है इनमें भी बड़ी तादाद गौवंश यानी गाय, बैल, बछड़ा, बछड़ी आदि की है। ऐसे में आवारा छोड़े गए अनुपयोगी गौवंश की तादाद पूरे राज्य में तेजी से बढ़ी है जिससे राज्य की सरकार द्वारा इसके समाधान की कोशिशें के रुप में बेसहारा/निराश्रित गोवंश संरक्षण योजना के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में बृहद गो संरक्षण केन्द्रो की स्थापना तथा शहरी क्षेत्र में वेसहारा गोवंश के संरक्षण हेतु कान्हा गो आश्रय का निर्माण कराया गया। इसके साथ साथ। उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्रीमान योगी आदित्यनाथ जी के द्वारा साल 2023 के जुलाई के महीने में उत्तर प्रदेश राज्य में खेत सुरक्षा योजना का शुभारंभ कर दिया गया है।

इस योजना का अन्य नाम सोलर फेंसिंग योजना भी है। उत्तर प्रदेश में बहुत सारे आवारा पशु है, जिनके द्वारा किसानों की फसलों को नुकसान पहुंचाया जाता है। ऐसे में उत्तर प्रदेश खेत सुरक्षा योजना के अंतर्गत किसान भाइयों की फसलों को आवारा पशुओं से बचाने के लिए उनके खेतों को बाड से घेर दिया जाएगा और बाड में सोलर एनर्जी के द्वारा 12 वोल्ट का करंट छोड़ा जाएगा। जिसकी वजह से खेत के पास आने पर अगर कोई जानवर खेत में प्रवेश करने का प्रयास करेगा, तो उसे हल्का सा करंट लगेगा। इससे जानवर की मृत्यु नही होगी, परंतु वह खेत में जाने से डरेंगे जिसकी वजह से किसानों की फसल

एस0एम0एस0/सह प्राध्यापक (प्रक्षेत्र प्रबन्धन), प्रसार निदेशालय

को आवारा जानवरों से नुकसान नहीं होगा। जब जानवर जैसे कि नीलगाय, सूअर, बंदर इत्यादि खेत में घुसेंगे तो करंट लगने पर हल्का सा सायरन की आवाज भी आएगी, जिसकी वजह से वह वहां से दूर चले जाएंगे।

मुख्यमंत्री खेत सुरक्षा योजना का उद्देश्य

यूपी में बहुत से किसान भाई रहते हैं, जिनके द्वारा अपने खेतों पर खेती की जाती है, परंतु यूपी में बड़े पैमाने पर आवारा जानवरों की समस्या भी बनी हुई है। कई बार जब किसान भाई विश्राम करने के लिए अपने घर पर चले जाते हैं तो मौका पाते ही उनके खेतों में आवारा जानवर घुस जाते हैं, जो खेत में मौजूद फसलों को नुकसान पहुंचाते हैं, जिससे किसान भाइयों को फसलों की सही पैदावार प्राप्त नहीं होती है और इससे उन्हें आर्थिक नुकसान भी होता है। इसीलिए सरकार के द्वारा उत्तर प्रदेश खेत सुरक्षा योजनाका शुभारंभ किया गया है। इस योजना के माध्यम से खेतों का घेराव बाड के द्वारा किया जाएगा और उसमें करंट छोड़ जाएगा जिससे जानवर खेत में नहीं जाएंगे और फसलों की रक्षा भी होगी।

मुख्यमंत्री खेत सुरक्षा योजना के लाभ एवं विशेषताएं

मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ जी के द्वारा उत्तर प्रदेश खेत सुरक्षा योजना को शुरू किया गया है। उत्तर प्रदेश खेत सुरक्षा योजना को सोलर फेंसिंग योजना के नाम से भी जाना जाता है। इस योजना का शुभारंभ मुख्य तौर पर किसान भाइयों के लिए किया गया है। योजना के लिए सरकार ने तकरीबन 350 करोड का बजट तय किया हुआ है। गवर्नमेंट के द्वारा इस योजना के अंतर्गत ऐसे किसान भाइयों को 60 परसेंट या 143000 का अनुदान दिया जाएगा जो लघु सीमांत किसान है। यह अनुदान प्रतिहेक्टेयर की लागत पर मिलेगा। उत्तर प्रदेश गवर्नमेंट के एग्रीकल्चर डिपार्टमेंट के द्वारा इस योजना के ड्राफ्ट को तैयार किया जा चुका है। जल्द ही उत्तर प्रदेश खेत सुरक्षा योजना को कैबिनेट से मंजूरी प्राप्त हो जाएगी। कैबिनेट से मंजूरी मिलने के बाद उत्तर प्रदेश के सभी जिले में इस योजना को चालू कर दिया जाएगा।

मुख्यमंत्री खेत सुरक्षा योजना में पात्रता

योजना का फायदा सिर्फ उत्तर प्रदेश के स्थाई निवासियों को मिलेगा। योजना का फायदा पाने के लिए सिर्फ किसान भाई पात्र होंगे। 18 साल अथवा उससे अधिक की उम्र के किसान भाई योजना में आवेदन कर सकते हैं। योजना का फायदा महिला और पुरुषों दोनों का मिलेगा।

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये : खेती में आगे बढ़िये

- फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, बागवानी, मत्स्य तथा पशुपालन विषय की वैज्ञानिक जानकारी देने वाली लोकप्रिय मासिक पत्रिका पूर्वाञ्चल खेती। चाहे प्रगतिशील किसान हों, बागवान हों या मत्स्य/पशुपालक, अनुसंधान/प्रसार कार्यकर्ता अथवा कृषि संकाय के छात्र तथा साथ ही साथ सभी के लिये उपयोगी आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, की हिन्दी मासिक पत्रिका पूर्वांचल खेती।
- पूर्वाञ्चल खेती की सदस्यता शुल्क रू0 270.00 मात्र (किसानों, छात्रों एवं लेखकों के लिए रू0 220.00 मात्र) है। जो निदेशक प्रसार, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या को मनीआर्डर/नकद भुगतान द्वारा प्रेषित किया जाना चाहिए। सदस्यता शुल्क भेजते समय अपना नाम व पता स्पष्ट अक्षरों में लिखना न भूलें। आपका सुझाव उत्तरोत्तर सुधार हेतु प्रार्थनीय है।

सफलता की कहानी

कृषि विविधीकरण ने बनाया मंशाराम को मालामाल

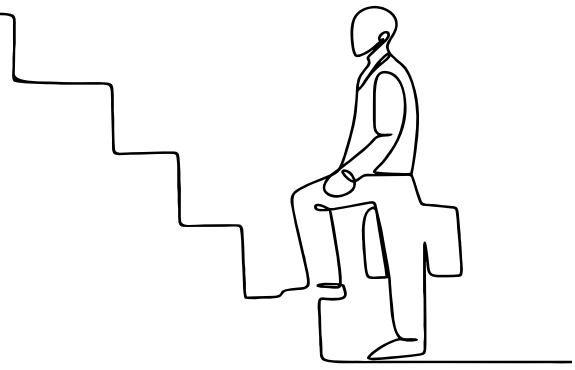

रूपन रघुवंशी, अश्वनी कुमार सिंह एवं शैलेश कुमार सिंह*

कृषक का नाम	:	**श्री मंशाराम यादव**
पिता का नाम	:	श्री मन्नूलाल
पता	:	गंगापुर संसारा, हैदरगढ़ बाराबंकी
मोबाइल	:	8853267903
भूमि उपलब्धता	:	12 एकड़
विशेषता	:	कृषि का विविधीकरण

कृषि एवं संबद्ध गतिविधियों में सफलता प्राप्त करने से पहले किसान की प्रारंभिक स्थिति : फसल विविधीकरण अपनाने से पहले श्री मंशा राम यादव जी धान, गेहूँ और सरसों की परंपरागत खेती करते थे। जिसमें उन्हें कम उन्नत किस्मों, उर्वरकों के असंतुलित उपयोग, कीटरोग, फसल चक्र, विपणन समस्या जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता था। (जिस कारण उन्हें कम आमदनी प्राप्त होती थी।

कृषि एवं संबद्ध गतिविधियों में सफलता प्राप्त करने के बाद किसान की स्थिति : कृषि विज्ञान केंद्र, हैदरगढ़ बाराबंकी के वैज्ञानिको से ट्रेनिंग लेने के बाद फसल विविधीकरण अपनाकर मंशाराम जी ने परंपरागत खेती के साथ साथ सब्जियो की उन्नत खेती जैसे की मटर, आलू मेंथा, गेंदे के फूल की खेती एवं साथ ही साथ पशुपालन भी शुरू कर दिया, जिससे उनकी आमदनी कई गुना फायदा हुआ है और वह आस पास के किसानो के लिए एक प्रगतिशील किसान का उदहारण बन गए है/इन्होने धान और गेहूँ का रिकॉर्ड पैदावार करके अन्तरराज्यी कीर्तिमान भी स्थापित किया है।

उपलब्धियाँ : मंशाराम जी को भारत सरकार एवं उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा विभिन प्रकार के पुरस्कारों से नवाजा जा चुका है।

- उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा किसान सम्मान दिवस पर सम्मानित नित किया गया है।
- आई. सी.ए. आर– भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा गेहू की अधिकतम उपज हेतु आवश्यक उपायों को विचार गोष्ठी में प्रस्तुति के लिए सम्मानित किया जा चुका है।
- आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या द्वारा कई बार सम्मानित किये गए है।
- वर्ष 2045 मे मंशाराम जी ने धान और गेहूँ का रिकॉर्ड उत्पादन करके कीर्तिमान स्थापित किया था।

मूल्य संवर्धन, अतिरिक्त आय, लिंग सशक्तिकरण, नवाचार : कृषि विविधकरण से मंशाराम जी को बहुत मुनाफा हुआ है। ये अन्ना फसलो के साथ साथ तिलहन सब्जियाँ एवं फूलो की खेती भी करते है। साथ ही पशुपालन से भी वो काफी आमदनी कम रहे है। मंशाराम जी आस पास के क्षेत्र के लोगो के लिए एक रोल मॉडल बन गए है। मंशाराम जी लोगो को फसल विविधकरण एवं उन्नत खेती तकनीक अपनाने के लिए प्ररित कर रहे है।

विवरण	कुल आय (रू./हे.)	शुद्ध आय (रू./हे.)
फसलें		
धान	85555	50180
गेहूँ	73965	43590
सरसों	66262	45013
चना	76000	45375
बागवानी		
मटर	99000	74000
आलू	219750	166417
मेंथा	103500	54082
गेंदा का फूल	250000	187500
पशुधन		
भैंस–2	34895	15995
गाय–2	33150	14650
योग	**1042077**	**696802**

कृषि विज्ञान केन्द्र, हैदरगढ़, बाराबंकी *वर्तमान पताः आईसीएआर–एमजीआईएफआरआई, मोतिहारी

जून माह में किसान भाई क्या करें

मृदा एवं उर्वरक प्रबंध
आर.आर. सिंह, मृदा विज्ञान

खरीफ फसल की तैयारी में उर्वरक प्रबंध करते समय असली नकली उर्वरकों की पहचान निम्नानुसार अवश्य करें–

1. यूरिया सफेद, चमकदार, लगभग समान आकार के गोल दाने, पानी में पूर्णतयः घुल जाना तथा घोलने पर ठंडी अनुभूति / गर्म तवे पर रखने से पिघल जाना तथा आंच तेज करने पर कोई अवशेष न बचना ही शुद्धता की पहचान है।
2. डी0ए0पी0 सख्त दानेदार, भूरा, काला, बादामी रंग से आसानी से न टूटना, चूने के साथ मिलाने पर तीक्ष्ण अमोनिया की गंध आना तथा गर्म तवे पर रखने पर दानों का फूल जाना शुद्धता की पहचान है। जबकि एस0एस0पी0 के दाने नहीं फूलते हैं।
3. जिंक सल्फेट की पहचान के लिये 1 प्रतिशत जिंक सल्फेट के घोल में 10 प्रतिशत सोडियम हाइड्राक्साइड का घोल मिलाने पर थक्केदार घना अवक्षेप बनना। इसी प्रकार डी0ए0पी0 के घोल को जिंक सल्फेट के घोल में मिलाने पर भी अवक्षेप बनना शुद्धता की पहचान है।

   म्यूरेट आफ पोटाश सफेद कणाकार पिसे नमक तथा लाल मिर्च जैसा मिश्रण जो नम करने पर आपस में चिपकते नहीं तथा पानी में घोलने पर खाद का लाल भाग पानी में तैरता रहता है, यही शुद्धता की पहचान है।

फसलो में
सौरभ वर्मा विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्य)

(1) प्रथम पखवारे में खेत की अच्छी तरह तैयारी कर खरपतवार निकालने के बाद प्रस्तावित धान रोपाई के क्षेत्र के 1 / 15 भाग में नर्सरी अवश्य डाल दें।

(2) खेत की अच्छी तैयारी एवं लेवा लगाने के बाद उर्वरकों को पाटा लगाने से पहले खेत में डालें। एक स्थान पर धान की 2–3 पौध 20 सेमी0 से 15 सेमी0 की दूरी पर रोपें। रोपाई के एक सप्ताह बाद रिक्त। को प्रजाति के पौध से भरें।

(3) देशी मक्का की बुवाई 45 सेमी0 .तथा शंकर व संकुल किसानों की बुवाई 60 सेमी0 की दूरी पर करें।

(6) उर्द, मूंग के फलियों की तोड़ाई अवश्य कर लें। अन्तिम तोड़ाई के बाद मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई कर दें।

(5) अगेती अरहर की किस्में टा–21 तथा उपास 120 की बुवाई खेत को अच्छी तरह तैयार करने के बाद ही 30–45 सेमी0 पंक्ति की दूरी पर करें। अरहर के साथ मृत सोयाबीन तथा तिल आदि की सहफसली खेती करें।

6) मूंगफली की टा.–64, टा.–28 चन्द्रा एम. 3, चित्रा. एम. 10 एवं कौशल जी. 201 की बुवाई जुलाई के प्रथम पक्ष में 30–40 सेमी0 पंक्ति से पंक्ति एवं 10–20 सेमी0 पौध से पौध की दूरी पर करें।

(7) तिल की उन्नतशील प्रजातियों जैसे टा 4, टा. 12 को 2.5 ग्राम प्रति किग्रा0 बीज की दर से शोधन के बाद 3 से 4 किग्रा0 बीज प्रति हेक्टेयर पंक्ति 30 से 45 सेमी0 की दूरी पर कम गहराई पर ही बोयें। नत्रजन 30 किग्रा0 पोटाश 15 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर कूड़ों में बीज के नीचे डालें।

सब्जी एवं उद्यान में
अश्वनी कुमार सिंह विषय वस्तु विशेषज्ञ (उद्यान)

(1) वर्षाकालीन प्याज की किस्म एग्रीफाउन्ड्डार्करेड या एल 883 एन. 22 की 10 किग्रा0 बीज प्रति हेक्टेयर की दर से नर्सरी डालें। अच्छे जल निकास के लिए क्यारी 15 सेमी0 जमीन से ऊँची बनायें।

(2) अगेती फूल गोभी दीपाली की पौध इस माह के प्रथम सप्ताह में डलें। 250 ग्राम बीज एक एकड़ के लिये पर्याप्त होगा।

(3) अगेती टमाटर एच एस–101, पूसा रूबी तथा पूसा अर्ली प्रजातियों की पौध इस माह में डालें। बीज की मात्रा प्रति एकड़ गोभी के समान।

(4) लंबे बैंगन पीएच. 4, पन्त सम्राट तथा गोल बैंगन पंत ऋतुराज एवं टा. 3 की पौध डाल सकते हैं।

(5) लता वाली सब्जियां जैसे तरोई, नेनुआ, लौकी, बारह मासी करेला की बुवाई कर सकते हैं। मचान बनाना आवश्यक है।

6) भिंडी, लोबिया आदि की बुवाई कर सकते हैं।

(7) अरूई, सूरन की असिंचित दशा में बुवाई कर सकते हैं।

संकलनकर्ता : डॉ. अनिल कुमार विषय वस्तु विशेषज्ञ, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

(8) बेर की कटाई एवं छंटाई का कार्य सम्पन्न कर लें तथा खाद एवं उर्वरक का प्रयोग कर दें जिससे आने वाली फसल अच्छी प्राप्त होगी।

(9) यदि जून के प्रथम सप्ताह में प्याज की पौध डालें हो तो उसकी रोपाई 15 x 15 सेमी0 के फासले पर 60:60:60 किग्रा0 नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से डालने के बाद जुलाई के दूसरे पखवाडे तक अवश्य कर लें।

(10) यदि किसी पौधे में मूलवृत से फुटाव आ रहा हो तो उसे तत्काल निकाल दें और यदि सम्भव हो तो नये रोपित पौधों को सहारा दें।

(11) सभी फल वृक्षों के पास 15–20 सेमी0 तक मिट्टी चढ़ा दें ताकि तने के पास पानी न लगें।

(12) आम, अमरूद, नीबू, पपीता, बेर, बेल एवं आंवला आदि के लगाने के लिये उचित दूरी पर रेखांकन करके गड्डों की खुदाई एवं भराई का कार्य पूर्ण कर लें।

पौध संरक्षण में

वी.पी. चौधरी एवं पंकज कुमार

विषय वस्तु विशेषज्ञ (फसल सुरक्षा)

(1) बीज को बोने के पूर्व 4 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन+3 प्रतिशत पारा युक्त रसायन या 19 ग्राम 6 प्रतिशत पारायुकत रसायन 45 लीटर पानी मे घोलकर 25 किग्रा0 बीज के हिसाब से 12 घण्टे तक उपचारित करने के बाद छाया में सुखाई करके बोयें। इसी तरह माह के दूसरे पखवारे में रोपाई के लिये धान की नर्सरी डालें।

(2) धान की नर्सरी में खैरा रोग का नियंत्रण 5 किग्रा0 जिंक सल्फेट + 2.5 प्रतिशत यूरिया या 2.5 किग्रा0 बुझा हुआ चूना से तथा सफेदा रोग का नियंत्रण 2.5 किग्रा0 फेरस सल्फेट +2 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव प्रति हे0 के हिसाब से करें।

(3) धान की बुवाई के तुरन्त बाद खरपतवारों के नियत्रण हेतु ब्यूटाक्लोर 50 ई.सी. 3–4 लीटर 600–800 ली0 पानी में घोलकर बुवाई के 24 घण्टे के अन्दर प्रति हे0 छिडकाव करें।

(4) बोई जाने वाली सब्जियों का बीज शोधन (2.5 ग्रा0 कार्बेन्डाजिम प्रति किग्रा0) करने के बाद बोयें।

(5) बेल वाली सब्जियों पर फलमक्खी का नियंत्रण 6 ली0 मैलाथियान प्रति हे0 की दर से स्प्रे करें।

(6) खर्रा रोग के नियंत्रण के लिये घुलनशील गंधक 0.1 प्रतिशत घोलकर छिडकाव करें।

(7) फलदार जंगली पौधों के रोपड़ के बाद पानी देते समय दीमक से बचाव हेत क्लोरोपाइरीफास 20 ई.सी. 2 मिली0 को प्रति लीटर पानी की दर से मिलाकर दें।

(8) जिन क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप होता है, वहां आखिरी जुताई पर 2 कुंटल नीम की खली/हे0 की दर से जमीन में मिला दें। यदि नीम की खली न उपलब्ध हो तो क्लोरोपाइरीफास 20 ई.सी. 2.5 ली0 को 5 ली0 पानी में घोलकर 20 किग्रा0 बालू, में मिलाकर प्रति हे० की दर से बुवाई के पहले मिट्टी में मिला दें।

पशुपालन में

सुरेन्द्र सिंह विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु विज्ञान)

(1) किसान भाई अभी तक मीठी सूडान, एम.पी. चरी, बाजरा तथा लोबिया की बुवाई न किये हों इस माह के अंत तक अवश्य कर लें।

(2) दुधारू पशुओं के पीने के लिये स्वच्छ व ताजा पानी दिन में कई बार दिया जाय। गर्मी से बचाव हेतु दोपहर के पानी में गुड़ अथवा इलेक्ट्राल दें।

(3) पोषक तत्वों की पूर्ति हेतु पशुओं को संतुलित आहार अवश्य दिया जाय।

(4) जिन पशुओं की अभी तक गला घोंटू बीमारी का टीका न लगा हो, उनका टीकाकरण करा दें।

(5) अण्डा तथा मांस उत्पादन करने वाली मुर्गियों में से अनुत्पादक मुर्गियों की छंटनी कर दें।

(6) गर्मी से बचाव हेतु कुक्कुट शेड की खिडकियों एवं दरवाजों पर बोरे लगाकर उस पर पानी का छिड़काव करते रहें।

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्नः ऊसर भूमि में कौन–कौन सी फसल ली जा सकती हैं?

(श्री इन्द्र देव वर्मा, तारून, जनपद–अयोध्या)

उत्तरः ऊसर भूमि में उपयुक्त सुधार को जैसे जिप्सम अथवा पाइराइट मई–जून में प्रयुक्त करने के उपरान्त जुलाई में धान की रोपाई करनी चाहिए। धान कटने के बाद रबी में जौ अथवा गेहूं की फसल उगानी चाहिए। ऐसे खेतों को प्रायः किसान भाई गर्मी में खाली छोड़ देते हैं, जिनसे हानिकारक लवण पुनः जमीन के सतह पर आकर जमा हो जाते हैं। अतः यह अति आवश्यक है कि गर्मी में

भी कोई न कोई फसल ली जाय। इसके लिए ढेंचा (हरी खाद) सर्वोत्तम मानी गई है। इस प्रकार तीन वर्ष लगातार धान–जौ/गेहूं, ढैंचा (हरी खाद) क्रम अपनाना चाहिये।

प्रश्नः धान की फसल में दीमक लग जाते हैं कृपया इसकी रोकथाम के उपाय बतायें।

(श्री कुंवर बहादुर सिंह, ग्राम–नन्दमहर, जनपद–अमेठी)

उत्तरः दीमक जड़ एवं तने को खाकर सुखा देते हैं। प्रकोपित सूखे पौधों को आसानी से उखाड़ा जा सकता है। फसल बोने से पूर्व ऐसे क्षेत्रों में कच्चे गोबर की खाद का प्रयोग न करें, फसल के अवशेष को नष्ट करें। प्रकोप होने पर सिंचाई के पानी के साथ क्लोरोपाइरीफास 20 ई.सी. 4.0 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

प्रश्नः धान में पोटैशिक उर्वरक कब दें?

(श्री राकेश कुमार, ग्राम–कुचेरा, जनपद–अयोध्या)

उत्तरः धान की फसल में रोपाई के पूर्व खेत की तैयारी करते समय मृदा परीक्षण के संस्तुति के आधार पर पोटाश उर्वरक की यूरिया के साथ टाप ड्रेसिंग के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है। अतः ऐसी भूमियों में रोपाई के समय पोटाश की आधी मात्रा को दो बार में नत्रजनधारी उर्वरक के साथ शाखाएं निकलने की अवस्था (टिलरिंग) तथा बाली निकलने की प्रारंभिक अवस्था पर प्रयोग करें।

प्रश्नः धान में खरपतवार नियन्त्रण हेतु कौन सी दवा प्रयोग करें?

(श्री बाबूलाल, ग्राम–पूरबिशेन, जनपद– सुल्तानपुर)

उत्तरः धान में खरपतवार नष्ट करने के लिए खुरपी या पैडी वीडर का प्रयोग करें। यह कार्य रसायनों द्वारा भी किया जा सकता है। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु के 24–डी.सोडियम साल्ट का 400 ग्रा0 (सक्रिय रसायन) प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग किया जा सकता है। इसका प्रयोग धान की रोपाई के दो सप्ताह बाद और सीधी बोआई के 20 दिन बाद करना चाहिए। रोपाई वाले धान में घास जाति एवं चौडी पत्ती वाले खरपतवार के नियंत्रण हेतु (ब्यूटाक्लोर) 50 ई.सी 3 लीटर प्रति हेक्टेयर रोपाई के 24 घण्टे में प्रयोग करें। प्रटीलावलोर 1.25 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से 36–48 घण्टें में प्रयोग करें। यदि खेत अधिक दिन रोपाई के हो गये हों तो विसपाश्रीवेक सोडियम 250 मिली/हे. स्प्रे कर 24 घण्टे बाद खेत में पानी भर दें या पेनोवसुलम 102 प्रतिशत डब्ल्यू साहलोफॉप व्यूटाइल 5 का 1000 मिली/हे. की दर से 15–18 दिन पर स्प्रे करें। चौड़ी पत्ती के खरपतवारों के लिए मेटसल्फ्यूरान मिथाइल 20 ग्राम/हे. की दर से स्प्रे करें।

प्रश्नः बैंगन की फुनगी में कीड़े लग रहे हैं, कोमल भाग सूख जाता है, नियंत्रण का उपाय बतायें?

(श्री चंद्रमोहन सिंह, ग्राम–मतऊ, जनपद–रायबरेली)

उत्तरः यह बैंगन का तना छेदक एवं फल छेदक कीट है। यदि बैंगन में फूल व फल न लगा हो तो साइपरमेथरीन 450 मिली 800 लीटर पानी में घोल कर प्रति हे0 की दर से छिडकाव करें। यदि फूल व फल आ गया हो तो इम्डिक्लोरप्रिड 0.5 मिली प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें।

प्रश्नः हमारे बैल का पैर लंगडा हो गया है, इससे बचाव कैसे करें?

(श्री मो. इरफान, ग्राम जगदीशपुर, जनपद–अमेठी)

उत्तरः आपके प्रश्न से ऐसा लगता है कि आप के बैल को एक टंगिया/लंगड़िया बीमारी लग गयी है। इस बीमारी से बचाव के लिए प्रत्येक वर्ष बरसात से पहले अपने निकटतम पशुचिकित्सालय पर अपने पशुओं को ले जाकर संबंधित बीमारी का टीका लगवा लें, टीका लगवाकर इस बीमारी से बचा जा सकता है।

प्रश्नः पशुओं को गला घोंदू व खुरपका बीमारी से कैसे बचायें?

(श्री रावेन्द्र प्रताप सिंह, ग्राम–दिहौली, जनपद–अमेठी)

उत्तरः पशुओं को विभिन्न बीमारियों से बचाव हेतु उनके पालन पोषण पर विशेष ध्यान दिया जाये। अच्छे स्वास्थ्य के लिये उन्हें पौष्टिक चारा के साथ–साथ रातब भी दिया जाना चाहिये। गला घोंटू, खुरपका व मुंहपका से बचाव हेतु अपने सभी पशुओं को अप्रैल से जून माह के बीच अपने निकटतम पशुचिकित्सा केन्द्र पर संपर्क करके पशुओं का टीकाकरण करवा लें। टीकाकरण हो जाने के बाद खुरपका, मुंहपका तथा गलाघोंटू से बचाव हो जाता है।

प्रश्नः हमारी गाय बार–बार गर्मी में आत्ती है, परन्तु गर्भधारण नहीं करती है क्या करें?

(श्री मो. आमिर, ग्राम–उदाहपाली, जनपद–अयोध्या)

उत्तरः गाय अथवा भैंस में गर्मी में आने के बाद गर्भधारण न करना एक समस्या बनती जा रही है। इसके लिये गाय अथवा भैंस के पोषण पर ध्यान देना आवश्यक है। साथ ही साथ रातब मिश्रण जो पूर्ण रूप से संतुलित हो, देना चाहिए। यदि किसी कारणवश संतुलित रातब नहीं दे पा रहे हैं तो गाय / भैंस को प्रतिदिन 40–50 ग्राम साधारण नमक तथा खनिज लवण अवश्य दें। कुछ समय बाद गाय /भैंस समय से गर्मी में आयेंगी। साथ ही साथ इस बात का भी ध्यान रखें कि गर्मी में आने के 42–46 थण्टे के भीतर उन्हें गर्भित अवश्य करा दिया जाये।

पंजीयन संख्या - 54461/91

डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	35.00
जिमीकन्द की खेती	25.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	25.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	75.00
फसल उत्पादन तकनीक	50.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	25.00
फल–सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार	75.00
गन्ने की आधुनिक खेती	25.00
जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक	35.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	25.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	35.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	40.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्ज़ियों की उत्पादन तकनीक	35.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	40.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	35.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	35.00
मछली पालन	40.00
फसल अवशेष प्रबंधन	30.00

प्रति रूपये 25/–मात्र

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषक:
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से डॉ. आर.आर. सिंह अपर निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित